परिवार

पृथ्वी पर का स्वर्ग

लेखिका
जेस्सी साजु

Sanctuary

Word Media Publishing Pvt. Ltd.
26/150A, Avees Building, Toll Jn., Edappally,
Cochin - 68 024, Kerala, India.
Tel: +91-484 2557606, 94471 54450, E-mail: sanctuarywm@gmail.com

Parivaar-Prithvi par ka Swarg (Hindi)
Kudumbam- Bhoomiyile Swargam (Malayalam)
Author:
Jessy Saju
Translated by:
A J Abraham
First published in hindi
June 2019
Published by:
Sanctuary Word Media Publishing Pvt. Ltd.
26/150A, Avees Building, Toll Jn., Edappally,
Cochin - 68 024, Kerala, India
Printed in India at:
Blitz Computers
Raipur, Chhattisgarh
Copyright @ 2018 Author
All rights reserved.

Distributed by:
A J Abraham, Bilaspur.
Mob: 9425549016
Contribution : Rs. 40/-

विषय सूची

आमुख	07
प्रस्तावना	09
1. बच्चों का पालन पोषण करते समय	11
2. मन फिराने की उम्र क्या है ?	19
3. आदर्श माँ	23
4. शिक्षा और प्रशिक्षण	27
5. घर में तनाव को दूर करें	33
6. बचपन की कुछ आदतें	37
7. बच्चों को यीशु दीजिए	41
8. यिफ्तह की बेटी	45
9. युवाओं के लिए एक संदेश	51
10. फलवंत दाखलता सी पत्नी	55
11. अच्छी बहू	59
परिशिष्ट	
हे माता पिताओं, अपने बच्चों के लिए	67
परिवार जिन्हें परमेश्वर बनाता है	71
घर बनानेवाले	77

आमुख

एक संडे स्कूल अध्यापिका ने कक्षा के बच्चों से पूछा, ''क्या आप लोग विश्वास करते हैं कि स्वर्ग और नरक वास्तविक हैं?'' बहुत से बच्चों ने कुछ नहीं कहा। एक बच्चे ने कहाः ''टीचर, मुझे यह तो नहीं मालूम कि स्वर्ग है या नहीं, लेकिन मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि नरक एक वास्तविकता है...।''

कैसे ? उत्सुकतापूर्वक अध्यापिका ने पूछा। ''मैं अभी वहीं से ही तो आ रहा हूँ।'' बच्चे ने बिना देर किए भोलेपन से उत्तर दिया !

कई घर आज नरक के समान हैं...अक्सर हमारे पास परामर्श लेने के लिए आने वाले दंपत्तियों और बच्चों को एक ही बात पर अफसोस होता है...''हमारा घर तो नरक है...।''

घर के विषय में परमेश्वर की परिकल्पना यह थी कि वह पृथ्वी पर स्वर्ग का प्रतिबिंब हो । आज भी ऐसे घर धरती पर के स्वर्ग हैं, जहाँ परमेश्वर रहता है, और वह शासन करता है ।

हम अपने घरों को तभी स्वर्गीय अनुभवों में ले जा सकते हैं जब हम व्यावहारिक रूप से यह समझ जाते हैं कि परिवारों के बारे मे बाइबल की परिकल्पना क्या है। मेरे जीवन की सबसे बड़ी आशीष है कि पति के रूप में मुझे ईश्वर भक्त व्यक्ति मिला। दूसरी आशीष यह है कि परमेश्वर की ओर से हमें प्राप्त हमारे तीनों बच्चे परमेश्वर की सेवा के लिए समर्पित हैं।

इस पुस्तक में इस विषय में कुछ सरल निर्देश समाहित हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में किस प्रकार घरों को परमेश्वर केंद्रित घर बनाया जा सकता है। इसमें के अधिकांश अध्याय ''उत्तम स्त्री'' नामक मलयालम पत्रिका में प्रकाशित हो चुके हैं। परिशिष्ट में शामिल लेख ''बहन'' नामक पत्रिका में छप चुके हैं। ''उत्तम स्त्री'' की संपादिका श्रीमती साली मोनाई और ''बहन'' की संपादिका लिल्ली रेजी के द्वारा दिए गए प्रोत्साहन को मैं इस समय आभारपूर्वक स्मरण करती हूँ। मैं अपने पति साजु मैथ्यू का भी धन्यवाद करती हूँ जो मेरे लिए हमेशा ही प्रेरणादायक और प्रोत्साहनकर्ता रहे हैं। परमेश्वर सबको आशीष दे ।

जेस्सी साजु

प्रस्तावना

इस बात में मुझे कोई संदेह नहीं हैं कि काफी समय से सी. एम. एस कॉलेज की विद्यार्थिनी, और तत्पश्चात प्रिय मित्र साजु मैथ्यू की पत्नी के रूप में सुपरिचित जेस्सी की नई रचना ''परिवार - धरती पर का स्वर्ग '' उन सभी के लिए तुल्य रूप से उपयोगी होगा जो गृहस्थ जीवन बिता रहे हैं और गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने वाले हैं। वर्तमान समय में जबकि यह माना जाता है है किसी भी काम के लिए प्रशिक्षण और कार्य का अनुभव बहुत आवश्यक होता है, हम बिना किसी प्रशिक्षण और तैयारी के अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य ''लालन पालन में प्रवेश करते हैं। प्राचीन परिवार व्यवस्था में अनुभव संपन्न बुजुर्गों का मार्गनिर्देशन प्राप्त होता था लेकिन अब स्थिति बिल्कुल बदल चुकी है।

गत् 20 वर्षों के दौरान केरल के परिवारों में जो विघटन हुआ है वह परेशान करने वाली है। सबसे अधिक दुख की बात तो यह है कि उसी जिले में विवाह विच्छेद के मामले सबसे अधिक हुए हैं जहाँ सबसे अधिक मसीही आबादी है। जब हम यह देखते हैं कि पेंतिकुस्त कलीसियाओं में भी विवाह विच्छेद अचरज की बात नहीं रह गई है, तो कम से कम कुछ लोग तो यह सोच ही रहे होंगे कि इस समस्या पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए।

जेस्सी इस पुस्तक के माध्यम से परमेश्वर के वचन के आधार पर उन मूल्यों की ओर इशारा कर रही हैं जिनकी अपेक्षा एक मसीही परिवार में की जाती है। इसमें एक मसीही कुटुंबिनी की जिम्मेदारियों - गर्भधारण या उससे भी पहले से लेकर जीवन के अंत तक पालन की जाने वाली व्यवस्था-का वर्णन सरल भाषा में बाइबल से उदाहरणों सहित प्रस्तुत की गई है।

ये मनन स्त्री समाज के लिए निश्चय ही लाभप्रद और उत्साहवर्धक होंगे जिन्हें पृथ्वी पर स्वर्ग का निर्माण करने के लिए नियुक्त किया गया है। साथ ही साथ मेरी प्रार्थना यह भी है कि यह पुस्तक माता पिताओं और अन्य लोगों के लिए भी आशीष का कारण बने ।

प्रोफेसर सन्नी मैथ्यूस

1

बच्चों का पालन-पोषण करते समय

जिन लोगों ने बच्चों का पालन-पोषण किया है उन्हें मालूम है कि यह बहुत आसान काम नहीं है। एक बार एक व्यक्ति ने मजाक में कहा, ''बच्चों के जन्म से पहले मैंने बच्चों के पालन पोषण करने के छः नियम सीख रखा था; अब मेरे पास छः बच्चे हैं। लेकिन वे सारे नियम हवा में उड़ गए हैं।''

संसार का सबसे महान और कठिन कार्य है 'लालन पालन' अथवा माता पिता का कार्य! हाँ, इतना अवश्य है कि इसके लिए किसी प्रकार की तन्ख्वाह नहीं दी जाती है!!

यह कार्य तब अधिक जिम्मेदारी वाला हो जाता है जब आप एक मसीही माता या पिता बन जाते हैं। क्योंकि सामान्य माता पिताओं को अपने बच्चों का पालन पोषण अपने सपनों-उद्देश्यों के अनुसार ही करना है। किन्तु मसीही माता पिता उनकी इच्छानुसार नहीं बल्कि इस आधार पर पालन पोषण करते हैं कि उनके बच्चों के प्रति परमेश्वर की इच्छा क्या है!

बच्चों के बारे में बाइबल कहती है कि ''लड़के यहोवा के दिए हुए भाग हैं, गर्भ

का फल उसकी ओर से प्रतिफल है'' (भजन संहिता 127:3)। अर्थात् हमारे बच्चों प्राथमिक रूप से हम नहीं अपितु परमेश्वर है! कुछ समय के लिए परमेश्वर उन्हें हमारे हाथों में सौंपता है। जब बच्चे हमारे पास होते हैं तब भी उनका स्वामी परमेश्वर ही है। इसीलिए बच्चों को उनके प्रति परमेश्वर की इच्छानुसार ही पालना चाहिए।

यदि इस बात को व्यावहारिक होना है तो हमें परमेश्वर के स्वामित्व को मन से (सिर से नहीं) स्वीकार करना है। परमेश्वर से पूछ कर जानना होगा कि ''हे परमेश्वर, मेरे बच्चे के बारे में आपका उद्देश्य क्या है।'' यदि यह संभव नहीं हो पाता है तो हम अपनी पीढ़ी को खो रहे हैं।

हमें यह जानना और अपने बच्चों को समझाना भी होगा कि घर, कलीसिया, और समाज में उनकी ईश्वरीय भूमिका क्या है। क्या हमें उन्हें अनंतता के लिए तैयार नहीं करना है? क्या कल उन्हें भी हमारे संग कलीसिया में नहीं देखना है?

हमें बच्चों की बढ़ती के प्रत्येक चरण में उन्हें परमेश्वर के भय में बढ़ाना है। ''बाल्यावस्था'' से ऐसा करना काफी नहीं है; उससे भी पहले माता के गर्भ में अस्तित्व में आने से लेकर उस शिशु को ईश्वरीय शरण में बढ़ाना हमारा कर्तव्य है। हमारा अध्ययन वहीं से प्रारंभ होना चाहिए!

हम जानते हैं कि एक व्यक्ति का अस्तित्व (being) तब प्रारंभ होता है जब देह (body) प्राण (soul)और आत्मा (spirit) एक साथ मिलते हैं। जब ये तीनों विभाग एक साथ बढ़ते हैं तभी एक व्यक्ति का बढ़ना (holistic) संपूर्ण होता है।

हम जानते हैं कि शरीर (देह) क्या है। लेकिन 'प्राण' शरीर के समान दृश्य नहीं है। प्राण हमारे मन (बुद्धि), विचारों (सोच), निर्णय शक्ति (इच्छा), भावनाओं (प्यार, करुणा, वात्सल्य आदि अच्छे गुणों) के साथ ही साथ इसके विपरीत गुणों का भी निवास है। किन्तु आत्मा परमेश्वर से संबंधित है। इन सभी स्तरों पर एक शिशु को बढ़ना चाहिए। यीशु के बढ़ने के बारे में बाइबल जो वर्णन करती है वह इसी प्रकार की संपूर्ण बढ़ती है। ''और बालक बढ़ता, और बलवन्त होता, और बुद्धि से परिपूर्ण होता गया; और परमेश्वर का अनुग्रह उस पर था'' (लूका 2:40)।

''और यीशु बुद्धि और डील-डौल में और परमेश्वर और मनुष्यों के अनुग्रह में बढ़ता गया'' (लूका 2:52)।

अभी तक हम समझ गए हैं कि एक बच्चे का बढ़ना केवल शारीरिक या बौद्धिक ही नहीं होता है। बच्चे को सद्विचारों और सुस्वभाव में बढ़ना चाहिए। समाज में अन्य लोगों के साथ संपर्क में बच्चे को परिपक्वता के साथ बढ़ना चाहिए। बच्चे का प्राण

न केवल विचारों के मामलों में बल्कि निर्मल (refined) भावनाओं की भी पोषक भूमि होना चाहिए। किन्तु केवल इतना ही काफी नहीं है। देह और प्राण के समान ही बच्चे की आत्मिक स्तर की बढ़ती भी अति महत्वपूर्ण है। बच्चे की बढ़ती में ईश्वरीय चेतना, ईश्वरीय विश्वास और ईश्वरीय भय होनी चाहिए जो आत्मा में पाई जाती है।

कुछ लोगों का विचार होता हैः आत्मिक बातों को बच्चा संडे स्कूल में सीख लेगा! अच्छी बात है। लेकिन बच्चे को आत्मिक सबक प्राथमिक रूप से संडे स्कूल अध्यापक से नहीं बल्कि अपने माता पिता - विशेषकर माता - से प्राप्त होता है!

बच्चे को कब से आत्मिक सबक देना प्रारंभ करना चाहिए?

एक बार एक स्त्री एक आत्मिक परामर्शदाता के पास जाकर पूछीः मेरा बच्चा अभी पाँच वर्ष का हो गया है। मुझे कब से बच्चे को आत्मिक पाठ सिखाना प्रारंभ करना चाहिए?

परामर्शदाता का उत्तर अर्थपूर्ण थाः ''सॉरी बहन, आप छः वर्ष पीछे रह गई हैं...!''

उनका कहना था कि बच्चा अभी पाँच वर्ष का ही हैः किंन्तु उन्हें उसे छः वर्ष पहले से ही आत्मिक बातों को सिखाना प्रारंभ करना चाहिए था! अर्थात् उनका कहना था कि जब बच्चा गर्भ में अस्तित्व में आया था तब से ही उसे आत्मिक प्रशिक्षण दिया जाना

चाहिए था।

मनोविज्ञान इस बात को स्वीकार करता है कि माँ की मानसिक स्थिति बच्चों के स्वभाव निर्माण में बहुत बड़ी भूमिका निभाता है। यदि गर्भावस्था में माँ को असुरक्षा की भावना परेशान करती तो जन्म लेने वाला बच्चा भी असुरक्षा की भावना से ग्रस्त रहेगा। यदि गर्भावस्था में माँ शांत और संतुष्ट रहेगी तो बच्चे भी बड़े होने पर 'कूल' दिखेंगे!

ये सब तो मनोविज्ञान और चिकित्साशास्त्र की बातें हैं! आईए हम देखें कि बाइबल की सोच क्या है। पुराना नियम में जो लोग 'नाजीर' कहलाते थे वे जन्म से नहीं बल्कि गर्भ से ही 'नाजीर' होते थे। शिमशोन की माँ से परमेश्वर ने कहाः ''तू गर्भवती होगी और तेरे एक बेटा उत्पन्न होगा। और उसके सिर पर छुरा न फिरे, क्योंकि वह जन्म ही से परमेश्वर का नाजीर रहेगा; और इस्राएलियों को पलिश्तियों के हाथ से छुड़ाने में वहीं हाथ लगाएगा'' (न्यायियों 13:2-5)।

जबसे नाजीर बच्चा गर्भ में अस्तित्व में आता है तब से माँ भी उसी संकल्प के अधीन आ जाती है। यद्यपि हमारे बच्चे पुराना नियम के नाजीर नहीं हैं तौभी वे भी संकल्प लिए हुए हैं। यहोवा के लिए शुद्ध हैं। यह परमेश्वर द्वारा माता पिता को सौंपी गई जिम्मेदारी है कि उन्हें पवित्रता में बढ़ाए।

यीशु की माता मरियम और पति यूसुफ तथा यूहन्ना बपतिस्मादाता की माता ईलीशिबा और पिता जकर्याह आदि ऐसे लोग थे जिन्होंने अपने होने वाले बच्चों के बारे में परमेश्वर की बुलाहट - उनके बारे में परमेश्वर के उद्देश्य को पहले से ही जान गए थे और उन्होंने गर्भस्थ शिशुओं को परमेश्वर को सौंप दिया था। जब से हमारे तीनों बच्चे गर्भ में अस्तित्व में आए थे तब से ही हमने उनके लिए प्रार्थना करते रहे थे कि ''वे परमेश्वर राज्य के विस्तार के लिए लड़ने वाले बनें।''

बच्चों के जन्म से पहले ही एक सीमा तक यह समर्पण अनिवार्य है। शमूएल की माता हन्ना की प्रार्थना सुनिएः ''और उस ने यह मन्नत मानी, कि हे सेनाओं के यहोवा, यदि तू अपनी दासी के दुःख पर सचमुच दृष्टि करे, और मेरी सुधि ले, और अपनी दासी को भूल न जाए, और अपनी दासी को पुत्र दे, तो मैं उसे उसके जीवन भर के लिये यहोवा को अर्पण करूँगी, और उसके सिर पर छुरा फिरने न पाएगा'' (1 शमूएल 1:11)।

'यदि तू मुझे एक बेटा दे तो मैं उसे तुझे (जीवन भर के लिए) अर्पण करूँगी! बच्चों के लालन पालन में हमें यही बात स्मरण रखना चाहिए...। 'यदि तू मुझे एक बेटा दे (इस बात का ज्ञान कि बच्चे यहोवा का दान हैं)...मैं उसे यहोवा को वापस करूँगी (स्वामी परमेश्वर है; बच्चे परमेश्वर के लिए तैयार करके परमेश्वर को वापस करने के लिए हैं।) कुछ समय के लिए नहीं - जीवन भर के लिए!'' मैंने इस बालक के लिए

प्रार्थना कीः मैंने यहोवा से जो विनती की थी वह उसने मुझे दे दिया है। वह जीवन भर यहोवा के लिए नाजीर रहेगा (1 शमूएल 1:27,28)।

आप पूछेंगे कि इस प्रकार यहोवा से बच्चे को लेकर यहोवा को ही वापस करने में माता पिता को क्या मिलता है। वास्तव में इसी से माता को कुछ प्राप्त होता है...। यदि हम वास्तव में बच्चों से प्यार करते हैं तो हम निश्चय ही यह देखकर आनंदित होंगे कि उनका जीवन अर्थपूर्ण हो रहा है। यही संतुष्टि एक माता पिता का प्रतिफल है।

यूहन्ना बपतिस्मादाता के जन्म से पहले - इलीशिबा के गर्भ में अस्तित्व में आने से पहले जर्कयाह ने ईश्वरीय दर्शन प्राप्त किया। परमेश्वर के दूत ने उससे कहा कि ''तेरी प्रार्थना सुन ली गई है और तेरी पत्नी इलीशिबा से तेरे लिए एक पुत्र उत्पन्न होगा, और तू उसका नाम यूहन्ना रखना। और तुझे आनन्द और हर्ष होगाः और बहुत लोग उसके जन्म के कारण आनन्दित होंगे'' (लूका 1:13,14)।

एक शिशु का आगमन हममें आनंद और खुशियाँ लाता है। वह परमेश्वर का दान है। बच्चा चाहे लड़का हो या लड़की, वह हममें आनंद और खुशियाँ लाना चाहिए! पक्षपात नहीं होना चाहिए।

इन दिनों कुछ ऐसे दंपति भी हैं जो यह सोचते हैं कि 'बच्चे नहीं चाहिए।' ऐसा भी देखी हूँ कि असमय जन्म लेने वाले शिशुओं का तिरस्कार किया जाता है। यह दुःखद बात है। आपके बच्चों को परमेश्वर ने आपको दिया है। आपको अपने बच्चों में आनंदित होना चाहिए।

बच्चे न केवल आपको बल्कि सबके जीवन मे आनंद लाते हैं। यूहन्ना

बपतिस्मादाता से परमेश्वर के दूत ने कहा, ''बहुत लोग उसके जन्म के कारण आनन्दित होंगे'' (लूका 1:14)। अपने बच्चों को केवल अपना नहीं समझना है। वे - केवल आपके लिए ही नहीं बल्कि दूसरों के लिए भी - परमेश्वर के दान हैं!

अगली बात जो जन्म लेने जा रहे यूहन्ना के बारे में दूत कहता है, ''वह प्रभु के साम्हने महान होगा'' (लूका 1:15)। अपने बच्चों के बारे में भी हमें यही आशा होनी चाहिए - परमेश्वर की निकटता में बड़े बनिए!

आज अधिकांश माता पिता इसी बात का परिश्रम करते हैं कि उनके बच्चे 'संसार' में बड़े बनें। सबसे अधिक मार्क्स, सबसे ऊँची शिक्षा, सबसे बड़ी नौकरी, किसी को भी ईर्ष्यालु बनाने लायक धन, संसार का सारा भोगविलास...। इस बीच अधिकाँश माता पिता यह नहीं सोचते हैं कि परमेश्वर की निकटता में उनके बच्चों का स्थान क्या है!

मैं यह नहीं कह रही हूँ कि हमारे बच्चे पढाई और नौकरी न करें। लेकिन हमारे बच्चों को सबसे पहले 'परमेश्वर की निकटता' में बड़ा होना चाहिए। हमारे बच्चों के बारे में परमेश्वर का उद्देश्य उनके जीवनों में पूरा होना वाहिए। हमारे बच्चे आत्मिक बनकर बड़े हों। न केवल कलीसिया में बल्कि समाज में भी हमारे बच्चे परमेश्वर के प्रतिनिधियों के रूप में बड़े होने चाहिए। ''मुझे इस से बढ़कर और कोई आनन्द नहीं, कि मैं सुनूँ, कि मेरे लड़के-बाले सत्य पर चलते हैं'' (3 यूहन्ना 4)।

अगली बात जो यूहन्ना के बारे में कही गई, यह है कि ''वह दाखरस और मदिरा कभी न पिएगा'' (लूका 1:15)!

हमारी नई पीढ़ी के लिए जो बात अनिवार्य है वह यही है - पवित्रात्मा! यदि हमारे बच्चों को इस टेढ़े और हठीले लोगों के बीच निर्दोष और भोले होकर परमेश्वर के निष्कलंक सन्तान बने रहना है (फिलिप्पियों 2:14) तो उनका पवित्रात्मा से भरा जाना बहुत ही अनिवार्य है।

हमारी प्रार्थना यही होनी चाहिए कि गर्भावस्था से ही शिशु को पवित्रात्मा से भर। ऐसी माँ ही अपने शिशु में पवित्रात्मा की भरपूरी साझा कर सकती है जिसके पास परमेश्वर की निकटता में उत्तम विचार होते हैं।

यदि बच्चों में पवित्रात्मा की भरपूरी होनी है तो हमें चाहिए कि हम उनमें संसार को न भरें। हम बच्चों को आत्मिक माहौल देते हैं या सांसारिक माहौल देते हैं?

पुराने समयों में माताएँ आत्मिक गीत गाते हुए बच्चों को स्तनपान कराती थीं। आजकल तो स्तनपान कराते हुए भी माँ के दोनों हाथ स्मार्टफोन के कीपैड पर विचरण कर रही होती हैं। स्तनपान कराते समय हम बच्चों को केवल भोजन ही नहीं दे रहे हैं बल्कि

सेवा, देखभाल, प्यार आदि सब एक साथ दे रहे होते हैं। आजकल बच्चे माँ का चेहरा ही नहीं देख पाते हैं, बल्कि उस स्मार्टफोन का पिछ्ला हिस्सा देख रहा होता है जिसमें माँ गेम खेल रही होती है। आज माताओं के पास इन बातों के लिए समय नहीं है कि वे बच्चों के रोने पर उन्हें लोरी गाकर सुलाए, बच्चे के लिए प्रार्थना करे, परमेश्वर का सहारा ले। स्मार्टफोन से गाना सुनाएँगे, वीडियो दिखाएँगे - बच्चों को चुप कराने के लिए आज की माताओं ने यही नया तरीका खोज निकाला है! ऐसा करने पर आप अपने शिशु की आँखो को ही नहीं बल्कि उनकी अनंतता को भी बर्बाद कर रहे हैं। बच्चे के स्तनपान के समय से लेकर आप उन्हें संसार के बजाय यीशु दें। वे पवित्रात्मा से भर जाएँ।

यूहन्ना के बारे में दूत आगे यह कहता हैः ''...इस्राएलियों में से बहुतेरों को उन के प्रभु परमेश्वर की ओर फेरेगा'' (लूका 1:16)।

हमारे बच्चे न केवल सत्य पर चलने वाले बनें बल्कि वे कईयों को सत्य की ओर लाने वाले भी बनें। हमें प्रार्थना करनी चाहिए कि हमारे बच्चों को अपने सहपाठियों और मित्रों को प्रभु की ओर लाने वाली एक मेल मिलाप (restoration) की सेवा के लिए बुलाहट और अभिषेक मिले। हम अपने बच्चों के विद्यालयीन जीवन के दौरान उन्हें सदा ही इस बारे में स्मरण दिलाते रहते थे। इसी कारण वे अपने सहपाठियों के सामने यीशु की गवाही देने में कभी नहीं हिचकिचाए। परमेश्वर ने उनका उपयोग किया कि कुछ लोगों को प्रभु की ओर 'लाएँ।'

अगली बात जो यूहन्ना के बारे में दूत कहता है, यह है कि वह बहुत से टेढ़े हृदयों को प्रभु के लिए तैयार करेगा (लूका 1:17)। पिता और बच्चों का मेलमिलाप कराएगा; अनाज्ञाकारी लोगों को वचन सुनने के लिए उत्सुक बनाएगा। मार्ग तैयार करेगा कि परमेश्वर उनके जीवनों में आए।

हमारे बच्चे मेल कराने वाले (मत्ती 5:9), और मनुष्यों तक परमेश्वर की शांति पहुँचाने वाले होने चाहिए।

ईलीशिबा के गर्भ में अस्तित्व में आने से पहले से ही परमेश्वर ने अपने दूत के द्वारा जकर्याह को बता दिया था कि यूहन्ना बपतिस्मादाता का जीवन किस प्रकार का होगा - उसके विषय में परमेश्वर की योजना क्या है। किन्तु मूसा के बारे में उसके जन्म के काफी समय बाद उसके माता पिताओं ने परमेश्वर का उद्देश्य जाना। बच्चे के जन्म होने पर उसके माता पिताओं ने यह देखकर उसे दिपा छिपा कि वह 'सुंदर है' (निर्गमन 2:2)। आप पूछ सकते हैं कि अपने बच्चे में किसे सुंदरता नजर नहीं आती। किन्तु स्फ्तुस के प्रचार में उसके विषय में कहा गया कि वह 'बहुत ही सुंदर' था (प्रेरितों 7:20)। परमेश्वर की नजर में सुंदर (beautiful in the sight of God) था।

मूसा के माता पिताओं ने इस बात को जान लिया कि एक ईश्वरीय कार्य के लिए परमेश्वर ने उनकी संतान को चुन लिया है। उन्होंने विश्वास से जान लिया कि यह इस्राएलियों का छुटकारा है। इसीलिए उन्होंने राजा की आज्ञा से बिना ना डरे शिशु को तीन महीने तक छिपा रखा (इब्रानियों 11:23)।

प्रत्येक माता पिता में आत्मिक दर्शन होना चाहिए कि अपने बच्चों की इस ''सुंदरता'' को देख सके। उन्होंने विश्वास से यह जान लिया कि यह इस्राएलियों का छुटकारा है। इसीलिए उन्होंने राजा की आज्ञा से डरे बिना (डर कर नहीं) शिशु को तीन माह तक छिपा रखा (इब्रानियों 11:23)।

प्रत्येक माता पिता के पास यह आत्मिक दर्शन होना चाहिए कि वे अपने बच्चों में इस आत्मिक सुंदरता को देख सकें। यह दर्शन पाने के बाद हम अपने बच्चों को संसार में बड़ा बनाने के लिए नहीं बल्कि 'प्रभु की निकटता में बड़ा' बनाने के लिए प्रयास करेंगे। उसके बाद हमारी प्रार्थना होगी कि ''हे परमेश्वर, मेरे बच्चे के बारे में आपका जो भी लक्ष्य है, उसके लिए उसे तैयार करने में मेरी सहायता कर।''

2

मन फिराने की उम्र क्या है ?

पिछले अध्याय में हमने यूहन्ना के जन्म के विषय पर अध्ययन में देखा कि माँ के गर्भ में संतान के अस्तित्व में आने से पहले, उनके बारे में 'ईश्वरीय बुलाहट' को जानना है।

माँ बच्चों में जितना अधिक प्रभाव डाल सकती है उतना अधिक और कोई नहीं कर सकता है। यदि एक माँ चाहे तो वह एक बच्चे को परमेश्वर की ओर ला सकती है और परमेश्वर से दूर भी ले जा सकती है।

'भाता के साथ सीख'...यही तो कहावत है। ''बच्चा ही तो है...ईश्वर की बातें समझ पाएगा? इतनी कम उम्र में उम्र उनसे ये सब बातें क्यों कहें? ''होने पर वे ये सारी बातें समझ लेंगें'' आदि बातें कहकर हमें अपनी जिम्मेदारियों से बचना नहीं चाहिए। मेरे जीवन में इस बात का सबसे बड़ा उदाहरण हमारी बड़ी बेटी श्रुति के मनफिराव की कहानी है।

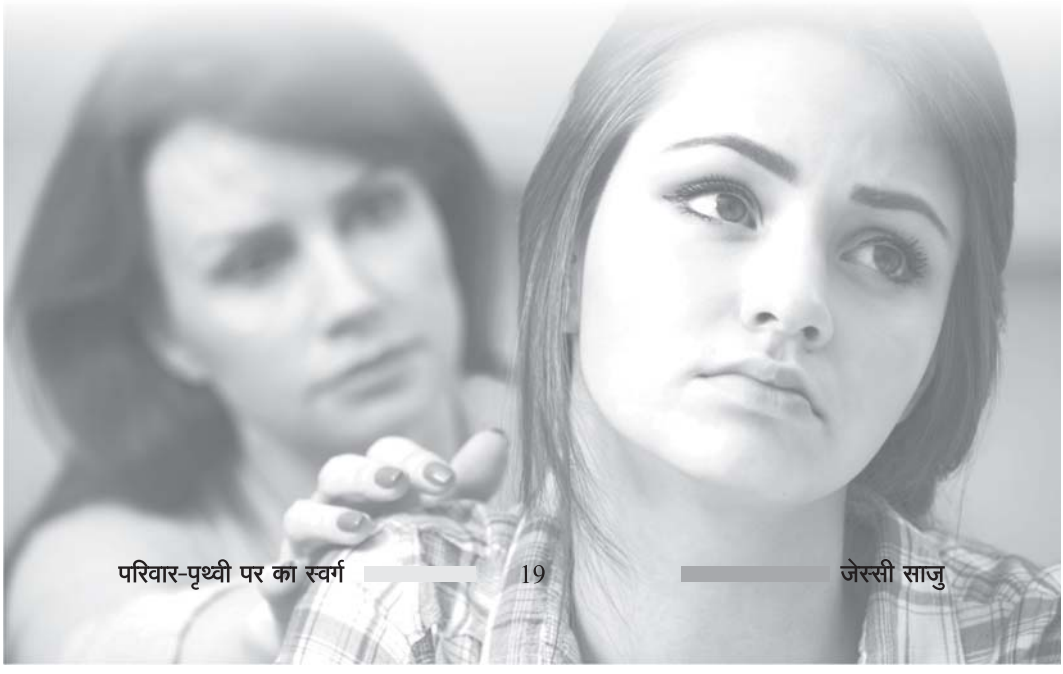

उस समय श्रुति साढ़े तीन वर्ष की थी। अपनी पारिवारिक प्रार्थना में मैं ने कुलुस्सियों 3 अध्याय पढ़ा। वह ध्यान से मुझे सुनती रही। जब मैंने 9 वाँ और 10 वाँ पद ''एक दूसरे से झूठ मत बोलो क्योंकि तुम ने पुराने मनुष्यत्व को उसके कामों समेत उतार डाला है और नए मनुष्यत्व को पहिन लिया है जो अपने सृजनहार के स्वरूप के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने के लिये नया बनता जाता है'' पढ़ा तो वह मुझसे बात करने लगी। ''माँ, पुराना मनुष्यत्व को उतारना क्या होता है?''

''बेटी, जब तुम बाहर से खेलकर आती है तो पसीना से गीली हो जाती हो न?''

''हाँ माँ, तब मैं स्वयं को भी पसंद नहीं करती हूँ। कपड़े बदबू देने लगते हैं...it smells bad''

''तब तुम क्या करती हो?''

''तब माँ मुझे नहलाती है।''

''जो कपड़ा तुम पहनी हो, उसका क्या करोगी?''

''उसको उतारकर कोने में डाल दूँगी।''

''जब माँ तुम्हें नहला देती है तब तुम कैसा महसूस करती हो?''

''वाह...मुझे बहुत अच्छा लगती है। नहाने के बाद अच्छी खुशबू आती है।'' उसने सूँघकर दिखाया।

''उसके बाद तुम क्या करोगी? उतारा हुआ कपड़ा फिर से पहन लोगी?''

''नो...बिल्कुल नहीं...उसे देखना भी मुझे पसंद नहीं है...।''

''फिर...?''

''माँ अलमारी से अच्छा खुशबूदार कपड़ा निकालकर देगी...मैं वह पहनूँगी...।''

''बेटी, हमारे जीवन में भी ऐसा ही कुछ होता है।'' मैंने उससे कहा।

जब हम संसार में एक एक पाप करके जीवन गुजारते हैं तो पाप रूपी पसीना हमारे जीवन में बदबू भर देता है। हमें एक ''स्नान'' या फिर एक शुद्धिकरण आवश्यक है। संसार का जल वह शुद्धता नहीं दे सकता है। माँ भी वह शुद्धता नहीं दे सकती है। इसीलिए यीशु पृथ्वी पर आए ।

जब हम यीशु से अपने पाप का अंगीकार करते हैं...अपने पाप की क्षमा के लिए आँसुओं के साथ निवेदन करते हैं तो यीशु हमारे हृदयों में आता है। हमारे लिए ही यीशु ने क्रूस पर मृत्यु सही। फिर यीशु हमारे हृदयों में आकर हमारे पापों को अपने रक्त से धोकर शुद्ध कर देता है। तब हम जिस प्रकार नहाकर नया वस्त्र धारण करते हैं उसी प्रकार यीशु को धारण करते हैं।

जिस प्रकार हमने पुराना वस्त्र उतारकर फेंक दिया है उसी प्रकार हम शैतान को उतारकर फेंकते हैं। शैतान ही हममें बुरा स्वभाव लाता है। हम लड़ाई करते हैं, हम झूठ बोलते हैं, यह सब इसी पुराने मनुष्यत्व को धारण किए हुए होने के कारण होता है। हमें उसे

उतारकर दूर फेंकना है। वह पुराना कपड़ा..smells bad कितनी बदबू है...लेकिन जो वस्त्र यीशु देता है...वह कितना सुंदर है। smells sweet...कितनी मोहक खुशबू है...उसे पहनने के बाद सब यीशु को देख सकते हैं। बेटी से मिलने पर लोग पूछेंगे न...वाह् कितनी सुंदर है...कितनी सुंदर फ्राक है...यह कहाँ से लिए...? उसी प्रकार जब हम यीशु को धारण करते हैं तब हमें देखनेवाले कहेंगे, ''कितना प्यारा बच्चा है...कितना अच्छा स्वभाव है, उसकी बातचीत कितनी मीठी है, वह कितनी सुंदर दिखती है...उसमें कितनी अच्छी खुशबू है...।

जब मैं इतन सब कह चुकी तो श्रुति रोने लगी। जार जार रोने लगी। उसकी दादी ने सोचा, शायद मैंने उसकी पिटाई की है। जब मेरी सास हमारे कमरे के पास आकर कारण जानने का प्रयास किया तो रोते हुए ही उसने अपनी दादी से क्षमा माँगा। फिर रोते हुए ही मुझसे भी क्षमा याचना की। मैंने छोटे छोटे वाक्यों में उससे प्रार्थना करवाया। यीशु ने उसे अपना स्वभाव रूपी नया वस्त्र दिया। यीशु का जीवन उसमें प्रवाहित हुआ। मुझे कभी भी उसे उसकी किसी गलती के कारण मारना नहीं पड़ा है। (अब वह बाइबल सेमिनरी में प्रशिक्षण लेने के बाद पति और बच्चे के साथ दिल्ली में रहते हुए स्थानीय मिशनरियों को प्रशिक्षण देकर ग्रामीण सुसमाचारीकरण में शामिल है।)

मुझे लगा कि मैं इस मन फिराव के बारे में अपने पति को जानकारी दूँ। मैं यह भी सोच रही थी कि न जाने उनकी प्रतिक्रिया क्या होगी। मैंने इतना ही कहा, ''बेटी को उद्धार मिला।'' वह तो खुशी के मारे भावविभोर हो गए। ''प्रेइस द लॉर्ड, थैंक्यू जीसस'' मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उन्होंने इस बात को कितनी गंभीरता से लिया। मैं कितनी मूर्ख थी जो यह सोच बैठी कि इतनी छोटी बच्ची के मनफिराव के बारे में सुनकर वे उसे यूँही हंसी में टाल देंगे ।

जब मैं 18 वर्ष की थी तब से मैं संडेस्कूल अध्यापिका थी। मैंने 25 वर्षों तक पढ़ाया। मैंने एल. के. जी. से लेकर कक्षा 2 तक के बच्चों को पढ़ाना चुना था। यदि इस उम्र में उन्हें यीशु को दिया जाए तो संसार उनमें प्रवेश नहीं करने पाएगा। वे बच्चे मेरी जिम्मेदारी बन गए। मुझे अवसर मिला कि उन दिनों सैकड़ों बच्चों को यीशु को दे सकूँ।

3 आदर्श माँ

एक बार एक सुसमाचार सेवा के पश्चात् वापस आने पर किसी ने स्पर्जन से पूछाः ''आज कितने लोगों ने उद्धार पाया?''

स्पर्जन ने उत्तर दिया, ''आज ढाई लोगों ने उद्धार पाया।''

''ऐसा क्यों, दो बड़े लोग और एक बच्चे ने उद्धार पाया?'' प्रश्नकर्ता ने पूछा।

''नहीं, दो बच्चे और एक वयस्क।'' स्पर्जन ने समझाया। ''वयस्क की आधी उम्र समाप्त हो गई है इसलिए उन्हें आधा ही गिनता हूँ और बच्चों की पूरी उम्र यीशु के लिए है। अतः उन्हें एक पूर्ण आयु मानेंगे।

पूरा जीवन पाप में बिताने के बाद आधा जीवन यीशु को समर्पित करने से उत्तम है, बाल्यावस्था में ही यीशु के लिए समर्पित करके जीवन भर यीशु का गवाह बनें।

लेकिन हम यह कहकर अपने बच्चे की आगे की जिम्मेदारियों से मुँह नहीं मोड़ सकते हैं कि ''मेरे बच्चे ने उद्धार पा लिया है।''

''स्त्री बच्चे जनने के द्वारा उद्धार पाएँगी'' (1 तीमुथियुस 2:15)। यह एक बार के प्रसव के बारे में नहीं कहा गया है। यह एक बार में होने वाले प्रसव के बारे में बात नहीं कर रहा है। यह एक 'प्रक्रिया' है। लगातार चलने वाली प्रक्रिया...।

जिस प्रकार साँप चालाकी से हव्वा को धोखा दिया उसी प्रकार हमारे बच्चों को धूर्तता से धोखा देने, उन्हें पाप में गिराने के लिए वह निरंतर प्रयासरत है। हमारी 'नजर' हमेशा उन पर होनी चाहिए कि उसमें वे न गिर जाएँ। भले ही वे एक बार यीशु को ग्रहण कर लिए हों, फिर भी वे निरंतर पाप और प्रलोभनों के संसार में जीते हैं।

बाइबल के जिस संदर्भ को हमने देखा उसमें भी हव्वा के उदाहरण को देने के बाद ही यह पद कहता है। ''और आदम बहकाया न गया, पर स्त्री बहकाने में आकर अपराधिनी हुई।'' ''तौभी बच्चे जनने के द्वारा उद्धार पाएँगी, यदि वे संयम सहित विश्वास, प्रेम, और पवित्रता में स्थिर रहें।''

एक माँ को तीन बातों में बच्चों के लिए आदर्श होना चाहिए। पहला, विश्वास में आदर्श होना चाहिए। तीमुथियुस के बारे में बात करते हुए पौलुस कहता है कि ''और मुझे तेरे उस निष्कपट विश्वास की सुधि आती है, जो पहिले तेरी नानी लोइस, और तेरी माता यूनीके में थी, और मुझे निश्चय हुआ है, कि तुम में भी है'' (2 तीमुथियुस 1:5)।

कुछ समय तक ही हम विश्वास का वर्णन करके दे सकते हैं। उसके बाद विश्वास को बताकर नहीं साझा करके देना चाहिए। 'बताने और साझा करने' में क्या अंतर है?

उदाहरण के लिए हम रबर की गेंद को देखें। हम एक गेंद को जितनी शक्ति से फेकेंगे उतनी ही शक्ति से वह वापस आएगा। किन्तु यदि हम उसे बिना फेंके धीरे से नीचे रख दें तो वह चुपचाप नीचे बैठ जाएगा।

इसी प्रकार यह हम बच्चों निरंतर चिताते रहें, हम उन्हें लगातार डाँटते फटकारते रहें तो उनसे हमें प्रतिक्रियाएँ प्राप्त होंगी। इसके बजाय यदि हम उनके समाने 'विश्वास, प्यार और पवित्रता में आदर्श जीवन जीकर दिखाएँ तो वे चुपचाप हमारा अनुगमन करेंगे। यदि जीकर न दिखाएँ और केवल बताते ही रहें तो वे हमें पलटकर जवाब देंगे...उसे उनकी प्रतिक्रिया कठोर और धारदार होगी।

विश्वास को पीढ़ियों तक फैलना है। किसी भी बात के लिए केवल यीशु में ही भरोसा रखना ही विश्वास होता है। उन्हें उम्र के हरेक पड़ाव में यह सत्य समझाया जाना चाहिए जो यीशु ने सिखाया कि ''मुझसे अलग होकर तुम कुछ नहीं कर सकते, तथा यह

भी कि हमारा संपूर्ण भरोसा यीशु पर है ।

दूसरी बात है कि हमें प्रेम मे आदर्श होना चाहिए। हम प्रेम में होकर ही उन्हें जीत सकते हैं। प्रेम प्रकट करना है। हममें जो ईश्वरीय प्रेम है वह निरंतर उनकी ओर बहना चाहिए। यदि ऐसा हो तो अन्य प्रकार के 'प्रेम' की ओर नहीं फिसलेंगे। ईश्वरीय प्रेम से उनका हृदय भर जाना चाहिए। ऐसा होने पर यह संसार और उसमें का झूठा प्यार उनमें प्रवेश नहीं कर पाएगा। इन सबसे बढकर हमें निरंतर यह जाँच भी करनी चाहिए कि जो कुछ हममें भरा है, क्या वह केवल ''ईश्वरीय प्रेम'' ही है। यदि हम इंटरनेट, फेसबुक, वाट्सएप,, गेम आदि की ओर झुककर अन्य अनावश्यक बातों की आकर्षित होकर अपने भीतर संसार को भर लेते हैं तो हम अपनी अगली पीढी के साथ 'परमेश्वर का प्रेम' साझा नहीं कर पाएँगे। यथासंभव अन्य संबंधों, चैटिंग, फोन, इंटरनेट, आदि से दूर रहकर और यदि संभव हो तो टी. वी. से भी दूर रहकर संसार को पूरी रीति से चौखट के बाहर रखकर परिवार में एक आत्मिक माहौल बनाने का प्रयास करना चाहिए।

एक स्त्री का सबसे बड़ा आभूषण 'पवित्रता' है। पवित्रता की सुंदरता अलग ही होती है। एक स्त्री के व्यक्तित्व को इसी बात से मापा जाता है कि वह कितनी पवित्र है। स्त्री की सुंदरता बाह्य सजावटों में नहीं है, ''और तुम्हारा सिंगार, दिखावटी न हो, अर्थात् बाल गूँथने, (अफ्रीकी देशों में उनके पास बाल तो होते नहीं हैं, इसलिए वे नकली बाल खरीदकर लगाती हैं और उस पर मोतियों से सजाती हैं। पौलुस हमारे द्वारा सुंदरता के लिए बाल गूँथने और सोने के गहने, या भाँति भाँति के कपड़े पहनने के बारे में नहीं कह रहा है। वरन तुम्हारा छिपा हुआ और गुप्त मनुष्यत्व, नम्रता और मन की दीनता की अविनाशी सजावट से सुसज्जित रहे, क्योंकि परमेश्वर की दृष्टि में इसका मूल्य बड़ा है। और पूर्वकाल में पवित्र स्त्रियाँ भी, जो परमेश्वर पर आशा रखती थीं, अपने आप को इसी रीति से संवारती और अपने अपने पति के आधीन रहती थीं (1पतरस 3:3-5)।

पति के अधीन रहने की बात भी पतरस पवित्रता की ओर संकेत करते हुए कहता है। एक स्त्री की सबसे बड़ा अनुशासन अधीनता है। जो स्त्रियाँ अधीन होना नहीं चाहती हैं उनका विवाहित जीवन में प्रवेश न करना सबसे अच्छा होता है। पुरुष स्त्रियों से जो बात सबसे अधिक चाहता है वह अधीन होने की भावना है। कोई पुरुष ऐसी स्त्री नहीं चाहेगा जो उसके सिर पर सवार रहती हो। जिस घर में स्त्री का शासन होता है वह नरक होता है। यदि केवल स्त्री की इच्छानुसार ही काम हों तो वह बिगाड़ में जा पहुँचेगा। परिवार का सिर पुरुष होता है। विशेषकर पत्नी का सिर पति होता है। आज्ञाएँ और उपदेश सिर से आती हैं। निर्णयों और निर्देशों को स्रोत सिर होता है। शरीर को केवल उन्हें मानना मात्र होता है। यदि सिर की इच्छानुसार देह प्रतिक्रिया दे तो उनका जीवन कर्णप्रिय संगीत बन

जाएगा। उस घर के बच्चे इस पवित्रता को देखकर बड़े होंगे। वे भी अपनी माँ की अधीनता को देखकर समझेंगे। अन्य घरों में जाने पर वे वहाँ पर भी अधीन रहेंगे। यदि एक लड़की का स्वभाव जानना है तो उसकी माँ का स्वभाव जानना काफी है... (जैसी माता वैसी पुत्री)

हम विश्वास, प्यार और पवित्रता में अपनी पीढ़ी के लिए आदर्श बनें। इस प्रकार वे हमारे द्वारा बच जाएँ! उद्धार पाएँ!!

4 शिक्षा और प्रशिक्षण

'एड्यूकेशन' शब्द की उत्पत्ति लतीनी शब्द 'एड्यूकेयर' से हुई है। उसका अर्थ होता है, 'बाहर की ओर लाना।'

एक व्यक्ति के भीतर की अच्छाई, प्रकाश, योग्यता आदि को बाहर लाने के लिए ही शिक्षित किया जाता है।

लेकिन वर्तमान समय में शिक्षा के माहौल पर अन्य कई बातों का कब्जा है। वर्तमान में शिक्षा प्रतिद्वंदिता पर आधारित हो गई है। पवित्र मानक अदृश्य हो गए हैं! 'अपरिचित' भाषा में पढ़ने के लिए विवश नन्हे मुन्ने! कौन इस बारे में सोचेगा कि यह उनकी रुचि के अनुसार है या नहीं? यह तो टिड्डियों से कंकड़ उठवाने वाला दौर चल रहा है। न जाने क्या कुछ याद कर लिया जाता है और उन्हें उत्तर पुस्तिका में लिख दिया जाता है

और उसके मूल्यांकन से 'बुद्धिमान' और 'बुद्धिमति' ठहाराना! यहीं मूल्य आधारित शिक्षा की प्रासंगिकता है।

सबसे बड़ा 'जीवन मूल्य' क्या है? 'प्यार करना; मनुष्य से प्यार करना; अपने आसपास से प्यार करना; जीवन को संभालने वाला प्यार ही तो है। हममें से जो प्यार बाहर आता है वही तो हमें दूसरों के दुःखों दुःखी होने, उसके आनंद में आनंदित होने और दूसरों की ओर करुणापूर्ण हाथ बढ़ाने के लिए हमें प्रेरित करता है।''

मेरी शिक्षा दीक्षा बेकर मेम्मोरियल विद्यालय, कोट्टयम, केरल में हुआ। उस विद्यालय की स्थापना चर्च मिशन सोसायटी (सी0 एम0 एस0) के मिशनरियों के द्वारा हुआ था। आज भी वह संस्था सम्मानित स्थान रखती है। जब वे प्रचार कार्य के लिए भारत आए तो उनके द्वारा हमारे छोटे से प्रदेश केरल में स्थित मीनच्चल तहसील का चुनाव करना आगे चलकर मेरे लिए लाभप्रद साबित हुआ। विद्यालय की आगे की कड़ी के रूप में सी0 एम0 एस0 महाविद्यालय की स्थापना हुई। वहीं पर मेरी आगे की पढ़ाई संपन्न हुई।

वे विदेशी लोग चाहें तो अपनी मातृभाषा अंग्रेजी माध्यम वाले एक विद्याालय की स्थापना कर सकते थे। लेकिन उनका मानना था कि प्रत्येक छात्र को कम से कम चौथी कक्षा तक अपनी मातृभाषा में लिखना पढ़ना सीखना चाहिए। विदेशी भाषा पाँचवीं कक्षा से पढ़ा जा सकता है। चूँकि वे इस बात के लिए निश्चिंत थे कि नींव रखा जाना मातृभाषा में ही होना चाहिए इसलिए वहाँ पर चौथी कक्षा तक अंग्रेजी माध्यम नहीं था। वे परमेश्वर के वचन के अध्ययन, प्रचार और मनन करने पर विशेष ध्यान देते थे। उसूलों वाले जीवन को प्रधानता दी गई थी। सैकड़ों गीतों वाली गीत पुस्तक को कक्षा में लाना अनिवार्य होता था। उस गीत पुस्तक में से गीतों को गाकर बाइबल पढ़कर मनन करके और परमेश्वर के वचन को सुनकर कक्षाओं की ओर जाते हुए ऐसा महसूस होता था मानो यीशु हम में भर गया है।

आईए, हम क्षण भर के लिए यीशु नामक गुरू पर ध्यान दें। यूहन्ना बपतिस्मादाता यह कहते हुए गुरू यीशु का परिचय कराता है कि ''देखो, यह परमेश्वर का मेम्ना है जो जगत के पाप उठा ले जाता है।'' शिष्यगण यीशु के पीछे हो लिए। ''तुम किसकी खोज में हो?'' यीशु ने प्रश्न किया। उन्होंने विनम्रतापूर्वक पूछा, ''हे गुरू, तू कहाँ रहता है?'' यीशु ने उत्तर दिया, ''चलो तो देख लोगे।'' उसके बाद उन्होंने उसके साथ समय व्यतीत किया। बाद में वे कहते हैं, ''हमको 'ख्रिस्तुस' अर्थात् मसीह मिल गया।'' एक रात! या फिर एक दिन!! यीशु के साथ कुछ समय रहना...उनके जीवन को पूरी तरह से बदल कर रख दिया। यहाँ हम एक सच्चे गुरू को दर्शन कर रहे हैं।

वर्तमान समय में 'गुरूकुल की शिक्षा-दीक्षा'' पूरी तरह गायब हो चुका है। शिष्यों का गुरू के साथ निवास करना; गुरू की आज्ञाओं का पालन करना, गुरू का प्रभाव, शिष्य के जीवन में परिवर्तन लाना...। आगे चलकर यह शिष्य गुरू के समान बन जाएगा। वास्तव में शिक्षा ग्रहण करने के द्वारा भी यही उम्मीद की जाती है।

किन्तु वर्तमान समय में यह तरीका व्यावहारिक नही है। समय तेजी से बदल रहा है। नौकरी पर जाने वाले माता पिता आज बच्चों को किसी और के भरोसे छोड़कर जाते हैं। हमेशा व्यस्तता... ! सारी व्यस्तता समाप्त होने के बाद भी उनके साथ बिताने के लिए हमारे पास समय नहीं होता है। विद्यालय से वापस आने वाले बच्चों के पास आप से कहने के लिए बहुत कुछ है। माता पिता उनका लाड़ देखने या प्यार जताना देखने में रुचि नहीं दिखाते हैं। 'आपसी बातचीत' बहुत अधिक कम हो जाना इस युग का 'श्राप' बन गया है। चूँकि बच्चों की सुनने के लिए समय नहीं है इसलिए खिलौने उनके साथी बन गए हैं। तकनीक के क्षेत्र में उन्नति करने के कारण माता पिता अपने बच्चों को वीडियो गेम, स्मार्ट फोन, ऐपैड, आदि देकर 'मुसीबत' को दूर रखना चाहते हैं ।

मेरी सहेली डॉ0 गीता ने मुझसे कहा, ''हम चाहें तो लाखों, करोड़ों कमा सकते हैं लेकिन अंत में हमारे पास केवल धन ही बचा रह जाएगा। जरूरी नहीं कि हमारे बच्चे हमारे साथ हों । इसलिए बच्चों का जन्म होते ही हमने मिलकर एक निर्णय लिया...अस्पताल प्रबंधन चाहे लाखों रुपये देने का प्रलोभन भी दे, फिर भी हम केवल दोपहर तक नौकरी करूँगी। दोपहर के बाद जब बच्चे वापस घर में आ जाते हैं तो बाकी समय उनके साथ बिताना है।

यदि रोते हुए बच्चों को गोद में लेकर पुचकारने का समय हमारे पास होता तो आज उसे याद करके हमें इतना रोना नहीं पड़ता।

बहुत छोटी उम्र में अर्थात् दो या तीन वर्ष की उम्र में ही वे स्मार्ट फोन और टैब का उपयोग करना सीख रहे हैं। उन्हें उन्हीं चीजों की ललक है। बाहर आँगन और गलियों में दौड़ भागकर खेलना उन्हें नहीं आता है। कमरे के बाहर उनकी खत्म सी हो गई है !

मैं अपने जेठ के पोते (एडम) को बहुत पसंद करती हूँ। वे सिंगापुर में हैं। छुट्टियों में आने पर मैंने उसे बहुत प्यार किया। छुट्टियाँ खत्म होने पर जब वे लौट रहे थे तब मैंने रोते हुए उसे गले लगाकर प्यार किया। मैंने कहा, ''मैं अब आदि को कब देख पाऊँगी?'' तुरंत ही जवाब आयाः ''जेस्सी आंटी मत रोईए - स्कैप (skype) है न...हम चैटिंग कर सकते हैं न।'' उस समय उसकी उम्र तीन वर्ष थी !

किसी और दिन घर में एक फोन आया। ''अपने गद्दा आर्डर किया था, उसे कंफर्म करने करने के लिए फोन किया हूँ।''...हम लोग चौंक गए। गद्दा...? तब पता चला। यही तीन वर्ष का नन्हा बच्चा इंटरनेट में खेल खेल में गद्दे का आर्डर दे बैठा था। यही है आज की दुनिया !

मैंने एक मुस्लिम गुरू का वीडियो देखा। वे परिवार के बारे में समाज को कितनी सटीक शिक्षा देते हैं। उनकी कुछ पंक्तियाँ, ''घर चार दीवारों का होता है, लेकिन परिवार व्यक्ति हैं। 9 बजे के बाद सभी परिवारों में फोन ऑफ होना चाहिए। आज की दौर का श्राप वाईफाई है। उसे ऑफ करना चाहिए। टी0 वी0 ऑफ करना चाहिए। इंटरनेट की सारी संभावनाओं और कंप्यूटर को ऑफ करना चाहिए। सब लोगों को उस दिन की बातें आपस में साझा करके बाात करनी चाहिए। पारिवारिक रिश्तों में गर्माहट बरकरार रखनी चाहिए। बच्चों को गोद में बिठाकर लाड़ प्यार करना चाहिए। उन्हें बताना चाहिए कि वे जब दूर थे तो मन को कितना क्लेश हुआ था (I love you and I miss you)। ऐसा चलता रहा उनका भाषण ! कितनी सही बात है !

विद्यालयों से वापस आने वाले बच्चे ही नहीं बल्कि पति पत्नियों के बीच में भी यह प्यार साझा करनी चाहिए। आपस में बात करनी चाहिए। घर में रहने वाले बुजुर्ग माता पिताओं से भी बातचीत करनी चाहिए। कंप्यूटर और फोन ने न केवल मनुष्य के समय को बल्कि बातचीत को भी निगल लिया है। इसलिए परमेश्वर ने 'बातचीत' का जो वरदान दिया था, वह कहीं खो सा गया है। पारिवारिक प्रार्थना भी बंद हो गई है। ऐसा कहा जाता है कि परिवार की सार्थकता मिलजुलकर रहने से है। मिलजुलकर रहने में प्रार्थना भी होनी चाहिए।

एक बार एक स्थानीय टी0 वी0 चैनल में हमारे परिवार का साक्षात्कार लेने के लिए कुछ लोग आए। वह 'परिवार संगीत नामक कार्यक्रम था। उस समय बच्चों की उम्र क्रमशः 17, 12, 10 वर्ष थे। जब उनसे पूछा गया कि उन्हें ''भविष्य में क्या बनना है'' तो उन सबने एक ही इच्छा व्यक्त किया कि उन्हें 'परमेश्वर की सेवा' करनी है। उन्होंने पहचान किया था कि संसार में करने लायक सबसे अच्छा काम यही है। जब उन्होंने पूछा कि पारिवारिक प्रार्थना कैसी है तो हमने उन्हें उत्तर नहीं किया बल्कि यह कहकर हमने पारिवारिक प्रार्थना किया कि आज की प्रार्थना मिलकर करते हैं। परमेश्वर के वचन पर मनन और प्रार्थना! परमेश्वर के वचन को पढ़ने के बाद परमेश्वर ने जो भी विचार या प्रकाशन दिया उसे कोई एक जन सबके साथ बाँटता है। यही पारिवारिक प्रार्थना ही जो हमारी आत्मिक उन्नति और परिवार की मजबूती का मूल कारण था। यह प्रकट सच्चाई है कि कई बार बच्चों के द्वारा व्यक्त किए गए 'मनन' ने हमारी आँखें खोली है। उन्होंने कई बार हमें 'सुधारा' है। ऐसा करने की स्वतंत्रता उन्हें है। जब हम उनके मुँह से सुनते थे कि ''पापा, यह ठीक नहीं हुआ; माँ, ऐसा नहीं बोलना चाहिए था...'' तो हम स्वीकार करने और मानने के लिए सदा तैयार रहते थे।

5

घर में तनाव को दूर करें

हम एक ऐसे दौर में जी रहे हैं जहाँ मानो आथित्य सत्कार समाप्त सा हो चला है। नौकरी करने वाले पति पत्नियों पर मुख्य रूप से दो बातें हावी रहती हैं - पहला, धन कैसे कमाना है। दिन रात वे इसके लिए भाग दौड़ करते हैं। दूसरा, मेहमाननवाजी की इच्छा होने पर भी वे देर शाम तक की नौकरी से थक कर चूर हो चुके होंगे। फिर घर के 'बचे खुचे कामों' को पूरा करते करते थोड़ा विश्राम करने की ही चाह शेष रह जाती है। इतने व्यस्त जीवन में वे संभव हो तो अतिथियों को दूर रखने का ही प्रयास करते हैं।

किन्तु 'आतिथ्य सत्कार करना एक ईश्वरीय आज्ञा है। अपने घर में बनने वाला अच्छा भोजन का एक भाग अतिथियों के लिए अलग करना चाहिए। बच्चे यह देखते हुए बड़े होंगे। वे इससे सीखेंगे और यह प्रेमपूर्वक और आदर के साथ दूसरों की देखभाल करने में उनके लिए प्रेरणा बनेगी।

हमारे घरों को स्वर्ग की एक छाया होनी चाहिए। यदि ऐसा हो तो हमारे घरों में आने वाले उस गर्माहट का अनुभव करेंगे। 'राह चलने वालों के लिए यहाँ भोजन उपलब्ध है' जैसे नारे अपने घर की दीवारों पर लिखनेवाले पासबानों व प्रचारकों का दौर कितना ईश्वरीय था। यदि हम राह चलने वालों को न दे पाएँ तौभी घर में पधारने वालों को

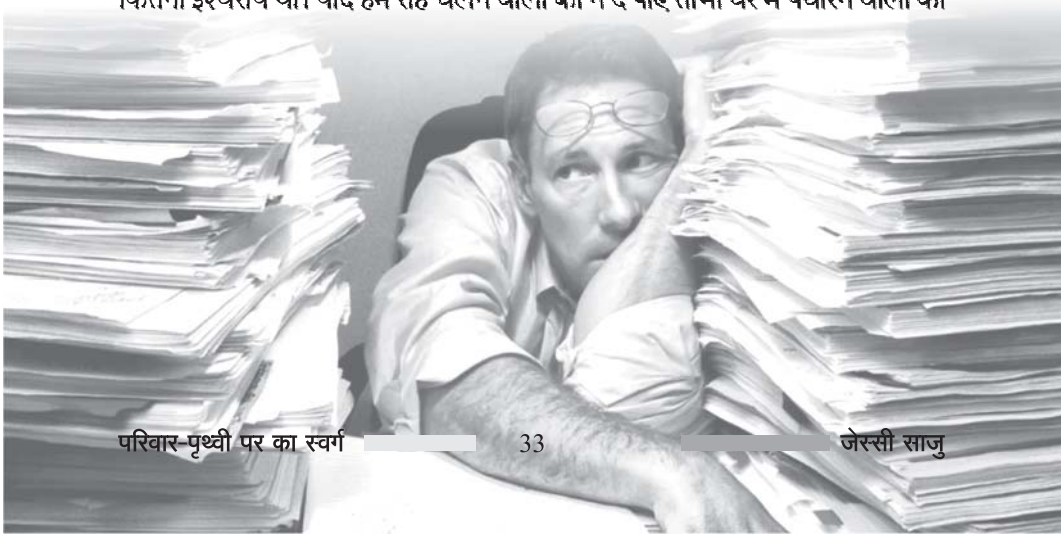

एक गिलास पानी पिलाने को लिए हम अवश्य तैयार हों।

बहुत छोटी उम्र में ही हमें बच्चों को छोटे छोटे काम करना सिखाना चाहिए। उम्र के अनुसार हमें उन्हें काम बाँटकर देना चाहिए। उनके छोटे कपड़ों को धोकर सुखाने के लिए उन्हें प्रेरित किया जाना चाहिए। उन्हें छोटी उम्र में ही जिम्मेदारी पूर्वक अपने छोटे भाई बहनों की देखभाल करना सिखाना चाहिए।

वे परमेश्वर की ओर से दी गई योग्यता और बुद्धि का उपयोग 'श्रेष्ठतम' रीति से करें। वे माता पिताओं या अध्यापकों के लिए न पढ़ें। बल्कि परमेश्वर के लिए पढ़ें। 'हम चाहे खाएँ या पिएँ, या कुछ भी करें, परमेश्वर के नाम को महिमा मिलनी चाहिए।' तो फिर पढ़ाई में भी परमेश्वर को महिमा मिलनी चाहिए। परमेश्वर के लिए हम चाहे कुछ भी करें, वह समर्पण के साथ (devoted) होना चाहिए। इस प्रकार हमें उन्हें समझाना चाहिए। तब वे अच्छी तरह पढ़ेंगे। उनमें उत्साह उत्पन्न होगा; उसमें समर्पण और प्यार होगा। हमेशा उनके पीछे पड़कर 'पढ़ो पढ़ो' कहने की जरूरत नहीं है। पढ़ने के लिए हमें उन्हें कभी मारना नहीं चाहिए। ऐसा करना उनमें अधिक भय और दबाव उत्पन्न करेगा। ''बच्चों को रिस न दिलाओ (इफिसियों 6:4) परन्तु प्रभु की शिक्षा, और चितावनी देते हुए, उन का पालन-पोषण करो। पढ़ाई के मामलों में हमें उन्हें किसी प्रकार का 'तनाव' नहीं देना चाहिए।

''अब बस करो, जाकर सो जाओ' एक बार ऐसा कहकर देखिएः वे पूरी तरह तनावमुक्त महसूस करेंगे। वे चैन की नींद सोएँगे। उनका मस्तिष्क कार्य करने योग्य होगा। इससे वे उन सब बातों को स्मरण कर पाएँगे जो उन्होंने पढ़ा है।

बच्चों को घर में दबाव रहित माहौल में बढ़ना चाहिए। माता पिताओं का समयोचित हस्तक्षेप उनमें बड़ा अंतर लाएगा। एक लड़की की कहानी से इस बात का वर्णन करती हूँ।

उसे उम्मीद के अनुसार अंक नहीं मिले। वह जीवन के कुछ निर्णायक फैसले लेने वाली परीक्षा थी। लड़की ने आत्महत्या करने का विचार बनाया। मैं ज्यादा गहराई में नहीं जा रही हूँ...वह मृत्यु से बच गई। एकलौती बेटी थी। घर का दबाव ही इस घटना के पीछे का एक मात्र कारण था।

बाद में मैंने उसकी माँ से पूछाः ''क्या हम लोग पैदा होने से लेकर अब तक क्या हम फर्स्ट डिवीज़न लेकर यहाँ तब पहुँचे हैं? क्या हम सभी 'औसत' मात्र नहीं हैं? हमारी बुद्धि ही हमारे बच्चों को भी मिलेगी। उससे अधिक हमें उनसे उम्मीद नहीं करनी चाहिए। हममें से कोई IAS तो नहीं हैं।

बच्चों को स्वतंत्रता और खुशी का अनुभव करते हुए पलने दीजिए। आँगन और गलियों में दौड़ भाग कर खेलने दीजिए। पड़ोसियों के घरों में जाने दीजिए। उनके साथ दोस्ताना संबंध बनाने दीजिए। उन्हें सामाजिक प्राणी बनकर जीने दीजिए। पिंजरे में कैद पंछियों के समान मत पालिए। दोस्तों और भाई बहनों के साथ लड़ते झगड़ते, खेलते कूदते, हँसते रोते बड़े होने दीजिए। वे समाज की संपत्ति हैं। उससे बढ़कर वे परमेश्वर की संपत्ति और जमापूँजी हैं। हम उसे निजी न बनाकर परमेश्वर के हस्तक्षेप के लिए दे दें।

6

बचपन की कुछ आदतें

सच्चाई यह है कि हमारे घरों में अकसर यहोवा के अलावा अन्य कई ईश्वर भी होते हैं। धन, पद, शिक्षा, बच्चे...जो जिससे अधिक प्यार करता है वही उसका ईश्वर है। जिस घर में हमेशा गूँजता रहता है कि ''जाओ, बैठकर पढ़ो'' उस घर का ईश्वर 'पढ़ाई' होता है। यदि हम हर समय धन की बात करते हैं तो धन हमारा ईश्वर है। यदि नौकरी और व्यवसाय के बारे में बातें होती रहती है तो वही हमारा ईश्वर है। यदि हमेशा बच्चों की तरक्की के बारे में बातें करते रहते है तो वही ईश्वर है। वह हमारी मूर्ति है। यदि हमेशा कंप्यूटर और मोबाईल लेकर बैठे रहते हैं तो वही हमारा ईश्वर है ।

हमें बच्चों को प्रोत्साहित करना चाहिए कि बाइबल के पदों को याद करें। हमारी बातचीत हमेशा आत्मिक बढोत्तरी लाने वाला होना चाहिए। हममें से ''बेकार की बातें, ठट्ठा की बातें'' नहीं निकलनी चाहिए। इसका मतलब यह नहीं है कि 'मुँह फुलाए' बैठे रहना है। दूसरों को आहत करने वाली, उनके व्यक्तित्व को चोट पहुँचाने वाली बातों से बचना चाहिए।

हमारे हाथों - कामों - को परमेश्वर को महिमा देनेवाला होना चाहिए। हाथ मारने के लिए नहीं है । वह सिर पर सहलाने के लिए है। सहायता करने और करुणा दिखाने के लिए हमारे हाथ हमेशा तैयार होने चाहिए। हमारे हाथ लड़ने के लिए नहीं बल्कि रास्ता दिखाने के लिए है।

कछ यहूदी अपने माथे के बीच यह वचन लिखा हुआ ताबीज बाँधते हैं। किंतु परमेश्वर ने अक्षरसः ताबीज बाँधने के लिए नहीं कहा था। आँखों के बीच में माथे के भीतर हमारे विचार स्थित होते हैं। हमारे काम वचननुसार होने चाहिए। यहाँ परमेश्वर हमें स्मरण दिलाता है कि हाथों के चिन्ह के समान हमारे विचार भी उसकी आज्ञाओं - व्यवस्था - के अनुसार होने चाहिए।

यह अपने घर की चौखट पर ''यीशु इस घर का स्वामी'' लिखकर रखने की बात नहीं है। जब कोई हमारे घर की चौखट पार करे तभी उसे अहसास हो जाना चाहिए कि यह यहोवा के लिए पवित्र है। यीशु ने भी कहा था न, ''चलकर देख ले...'' यदि उसके साथ बिताया हुआ समय शिष्यों के रूपांतरण का कारण बना तो हमारे घरों में आनेवालों को पता चलना चाहिए कि यह पवित्र घर है। यहाँ रहनेवाले सभी का एकसा स्वभाव - पिता का स्वभाव (यीशु का स्वभाव) - है ! हरेक परिवार को यीशु की देह का अंग होना चाहिए। तब केवल हम ही नहीं हमारे घर में आनेवाले भी आशीषित होंगे।
यीशु जब बालक थे तब उसने जो सीखा और बाद में उसने जो सिखाया वह था 'शेमा।' यहूदी हर रोज अपने घर में जो गाते और बात करते हैं वह है शेमा। हमारे घरों में भी हमेशा परमेश्वर का वचन बोला और गाया जाना चाहिए।

जिन घरों में आत्मिक वातावरण तैयार किया जाता है उन घरों में बच्चों में भी उसके लिए प्यास होगी। विद्यालय जाने से पहले की उम्र में बच्चों में यीशु भरना चाहिए। जिन बच्चों में यीशु भरता है उन बच्चों में स्वार्थ नहीं हेाता है। बच्चों को जो कुछ उनके पास है उन्हें बाँटना और प्यार करना आदि सीखना है। उन्हें हमारा अतिथि सत्कार, साझा करना आदि सब देखते हुए बड़ा होना चाहिए ।

हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि इस उम्र में उनमें 'ईगो' न बढ़े। यद्यपि बच्चों को प्रोत्साहन की आवश्यकता है, फिर भी उनमें यह भावना बढ़ने नहीं देना चाहिए कि वे 'बहुत कुछ' हैं। घर में आने जाने वालों के सामने बच्चों की 'योग्यताओं' का वर्णन करने की जल्दबाजी माता पिताओं को नहीं करनी चाहिए। ''एक गाना गाओ, बेटी...अंकल को सुनाओ तो जरा...'' बिटिया अच्छा गाती है...डाँस भी करती है...जैसी बातें यदि हम करते हैं और उनमें 'अहम' की भावना बढ़ाते हैं तो यह भलाई से अधिक बुराई उत्पन्न करेगी। उनमें यह भावना घमंड में बदल जाएगा कि 'मैं कुछ हूँ।' इसका अर्थ

यह नहीं है कि उन्हें दबाकर रखें। सामान्य रीति से उनका पालन पोषण कीजिए। बच्चों को यह जानना चाहिए कि वे घर के अन्य सदस्यों के समान और उनमें से एक हैं। आजकल अकसर हम घर के बड़ों की अवहेलना करके बच्चों पर विशेष ध्यान देते हैं। यह बच्चों में ऐसी भावना बढ़ाएगा कि वे अन्य लोगों से 'विशिष्ट' हैं।

उदाहरण के लिए मान लीजिए कि एक घर में 4 लोग हैं। यदि उस घर में 4 टॉफी या 4 केले हैं तो उन्हें बराबर बाँटना चाहिए। अपना हिस्सा हम स्वयं खाएँ। बच्चों के देखते ही हमें अपना हिस्सा खाना चाहिए। हमें कभी नहीं कहना चाहिए कि 'मुझे नहीं चाहिए, तुम खालो बेटा।' यदि ऐसा करेंगे तो वह सोचेगा, 'मैं इस घर का राजा हूँ।'' मुझे इस घर में सब बहुत पसंद करते हैं, इसलिए मेरी हर जिद पूरी की जाएगी...।'' तभी से वे रोकर बात मनवाना सीखते हैं। वे चाहे जितना रोएँ, हमें उनकी जिद के आगे नहीं झुकना चाहिए। यदि एक बार हम उनके रोने पर उनकी जिद पूरी करेंगे तो वे हमेशा यह चाल चलेंगे। क्रमशः वे हर बात में जिद करके हर उम्र में यही करेंगे। यदि बचपन से ही इस आदत को नोच लिया जाए तो फिर वे हमें चाकू दिखाकर धमकाकर काम निकालने का प्रयास नहीं करेंगे। लाड़प्यार अच्छा है परन्तु कभी कभी छड़ी उठाना और अनुशासन सिखाना अच्छा होता है। लेकिन और किसी का गुस्सा निकालने के लिए हमें उन्हें मारना नहीं चाहिए।

◆◆◆

7

बच्चों को यीशु दीजिए

हमने यह सीखा कि बचपन में बच्चों में यीशु भर जाए और हमारे घरों में तनावरहित पारिवारिक माहौल हों।

अगला किशोरावस्था है! 13 से 19 तक की उम्र! किशोरावस्था शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों का समय है! अब वे हर बात के लिए माता पिता का सहारा लेना छोड़कर स्वतंत्र निर्णय लेने लगते हैं। उनके सामने अच्छाई और बुराई का संसार खुल जाता है। इस उम्र की एक बड़ी समस्या भावनाओं में उथल पुथल है।

जबकि लड़के जल्दी प्रतिक्रिया देते और क्रोधित होते और 'विद्रोही' स्वभाव दिखाते और पलटकर जवाब देने में नहीं हिचकते हैं तो दूसरी ओर लड़कियाँ अधिकतर मौन रहती और अंतर्मुखी हो जाती है तथा सहेलियों के साथ अधिक बात करना पसंद करती हैं। कुछ हद तक माता पिताओं को बच्चों का ऐसा स्वभाव देखकर 'कंफ्यूशन' होता है। उनके मनों में यह चिंता घर कर जाती है कि 'मेरे इस बेटे को हुआ क्या है?'

''लड़के को शिक्षा उसी मार्ग की दो जिसमें उसे चलना चाहिए; और वह बुढ़ापे में भी उससे नहीं हटेगा'' (नीतिवचन 22:6)। यह ऐसा काम है जो हमें किशोरावस्था से पहले

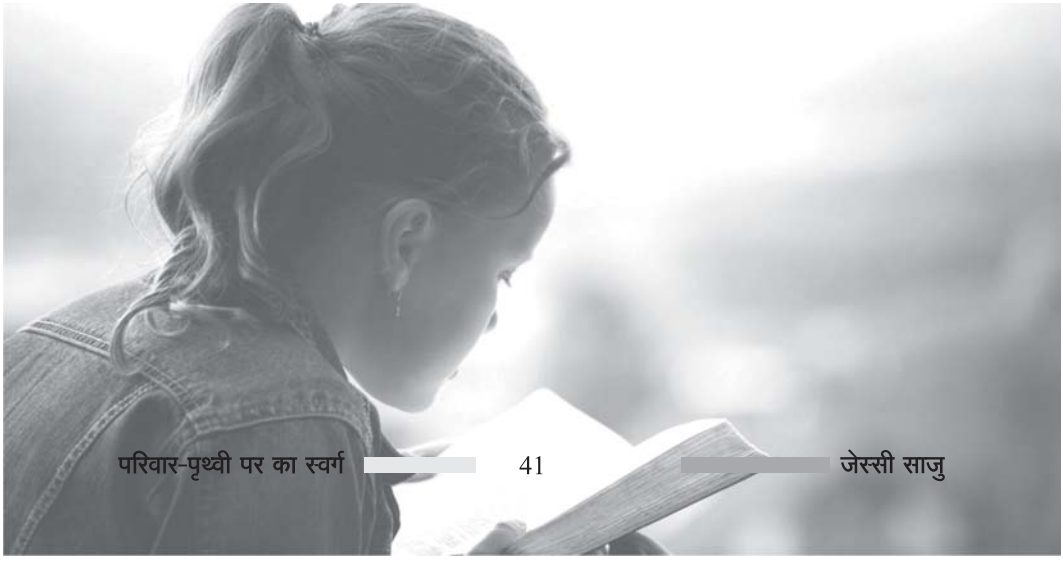

ही कर लेना चाहिए। किंतु जो बच्चा ईश्वरीय मार्ग का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका है उसे उसमें चलते रहने के लिए किशोरावस्था में ही हमें प्रोत्साहित करते रहना चाहिए।
नीतिवचन में 31 अध्याय है न ! हमें बच्चों को प्रोत्साहित करना चाहिए कि उसमें से रोज एक अध्याय पढ़ें और कुछ पद याद करें।
''जैसे वीर के हाथ में तीर, वैसे ही जवानी के लड़के होते हैं'' (भजन 127:4)।

परमेश्वर ने हमारे ही हाथ में अस्त्र दिए हैं। हम जिस किसी उद्देश्य के साथ उसे किसी ओर भेजते हैं वह वहीं जा लगेगा। इसी प्रकार हम छोटी उम्र में ही उनमें यीशु को भरें। यदि संसार उनमें से यीशु को देखने लगे तो निशाना कभी भी नहीं चूकेगा ।

मान लीजिए उनमें उम्र की चपलता और 'विद्रोही' स्वभाव अंकुरित हुआ है। यदि ऐसा है तो निराश होने की आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर हमें जो आशा देता है, वह यह है कि किसी भी उम्र में परमेश्वर के पास लौटा जा सकता है। परमेश्वर के साथ एक व्यक्तिगत संबंध में प्रवेश करने के लिए उम्र कोई कारक नहीं है। उनके मनफिराव के लिए, मसीह के साथ एक व्यक्तिगत सामना (personal encounter) होने के लिए निरंतर प्रार्थना करें।

हमें अपने बच्चों के विषय में ईश्वरीय बुलाहट को पहचानना है। हमारा लक्ष्य होना चाहिए कि वे परमेश्वर के राज्य में बड़ा बनें। इस प्रकार हमें तब तक परमेश्वर का सहारा लेना और प्रार्थना करनी चाहिए जब तक हमारा तीर लक्ष्य को न भेद ले।
यूहन्ना और याकूब की माता की इच्छा थी कि उसके बच्चे यीशु के दाहिने और बाएँ बैठें। उस पर का धर्मविज्ञान चाहे कुछ भी हो, उस माँ ने चाहा कि इस संसार में बड़ा बनने के बजाय वे 'परमेश्वर के राज्य में बड़ा' बनें।

परमेश्वर का उद्देश्य है कि बच्चों का पालन पोषण करने के द्वारा हमारा धीरज, सहनशक्ति और प्रेम बढ़े। किशोरावस्था की एक विशेषता है कि लड़के सबकुछ मुँहफट होकर कह देते हैं। यह सुनकर हमें डरना नहीं है। कई बार वे हमारी 'नकारात्मकता' को ही मुँहफट होकर कहते हैं। जो कुछ वे कह रहे हैं उन पर शांत मन से विचार करना और यह समझकर कि उनका कहना भी सही है, विनयपूर्वक पछताना और परमेश्वर की ओर लौटना ही उत्तम होता है ।

वे निरंतर हमारा उपदेश सुनने के बजाए हमारा जीवन देखकर सीखना अधिक पसंद करते हैं। उन अनुभवों को उनसे बाँटना अच्छा होता है जो उनकी इस उम्र में हमें हुआ था। ऐसा करना उनमें नई जागृति और प्रोत्साहन उत्पन्न करेगा। उन्हें यह अहसास होना चाहिए कि जो कुछ हम कह रहे हैं वह 'उपयुक्त' है ।

उन्हें अपना धन, संपत्ति देना प्राथमिकता नहीं है। उन्हें प्राथमिक रूप से यीशु दीजिए। दूसरा, उन्हें स्वयं को, अर्थात् अपना समय दीजिए। यही दोनों सबसे बड़ी संपत्ति है जो हम उन्हें दे सकते हैं ।

जब हमारे एक रिश्तेदार मरने पर थे हम उनसे मिलने गए। वे उस गाँव के जमींदार और 'खेती के लिए अवार्ड' से सम्मानित व्यक्ति थे। मुझे अपने पास बुलाकर उन्होंने धीमें से कहा, ''बेटी, तुम बच्चों के लिए धन संपत्ति इकट्ठा नहीं करना। मैंने ऐसा किया जो मेरा पराजय बना। तुम उन्हें यीशु देना।''

इतनी अधिक संपत्ति इकट्ठा करने वाले व्यक्ति की वह आवाज आज भी मेरे कानों में गूँजती रहती है। 'सांसारिकता' का अर्थ यही है। ऐसे लोग का अंत ऐसा ही होता है जो बच्चों को यीशु दिए बिना भागदौड़ वाली जिंदगी जीते हैं ।

कुछ बातें हैं जो बच्चे माता पिताओं में देखने की उम्मीद करते हैं। वे चाहते और उम्मीद करते हैं कि उनके माता पिता पवित्र पारिवारिक जीवन जीनेवाले, परस्पर प्यार करनेवाले और आदर्श जीवन जीने वाले हों जिन पर उनके बच्चे गर्व कर सकें।

वे चाहते हैं कि उनके लिए हम अपना समय अलग करें। जो माता पिता अपने बच्चों से दूर हैं वे रोज उनसे बातें करें। हालचाल पूछें। निरंतर प्रोत्साहित करें और उनकी प्रशंसा करें।

उनकी किशोरावस्था में उनसे मित्रों के समान व्यवहार करें। बहुत ही आदर, उत्साह के साथ प्रोत्सहन देते और प्रशंसा करते हुए उनका पालन पोषण करें। अपने आपको उन्हें दें। उन्हें यीशु को दें।

8

यिफ्तह की बेटी

पहाड़ी प्रदेश मिस्पा का एक छोटा से घर। प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर इस गाँव में जन्म लेना मेरा सौभाग्य है। शहर का कोलाहल और लड़ाईयों का शोर यहाँ नहीं है। यह जगह शांत और सुरम्य है। हिमाच्छादित पहाड़ियों पर नजरें गड़ाए वह (यिफ्तह की बेटी) आँगन में बैठी थी। उसने सोचाः आज मेरे पिताजी आएँगे। इस्राएल के लिए अम्मानियों से युद्ध करने गए उन्हें काफी दिन हो गए हैं।

जब घोषणा की गई थी कि पिताजी ने जिस युद्ध का नेतृत्व किया था उसमें विजय मिली है तो उसने कितने आनंद के साथ यह समाचार सुना था। चाहे कुछ भी हो, आज पिताजी को सभी पसंद करते हैं। सम्मान भी देते हैं। लोगों का मुखिया और सेनापति हैं। अपने विचारों को वह विगत दिनों की ओर ले जाने लगी।

पिताजी बहुत अपमान सहकर बड़े हुए हैं। दादाजी ने दादीजी से विवाह नहीं किया था! उनकी अधिकृत पत्नी और बच्चे थे। अधिकृत बच्चे जब बड़े हुए तो उन्होंने पिताजी से कहा थाः ''तू तो पराई स्त्री का बेटा है; इस कारण हमारे पिता के घराने में कोई भाग न पाएगा'' (न्यायियों 11:2)।

पिताजी ने किसी के साथ झगड़ा नहीं किया। दादीजी ने पिताजी को परमेश्वर में भरोसा रखना और केवल उसी में आशा करना सिखाया था। पिताजी अपने भाईयों से अलग होकर तोब देश में आकर रहने लगे। पिताजी के मित्रगण बहुत ही साधारण लोग थे (न्यायियों 11:3)। किंतु परमेश्वर पिताजी के साथ था। मेरे जन्म लेने पर भी मुझे सुनााने के लिए उनके पास व्यवस्था ही थी। पिताजी ने हमेशा सिखाया कि मनुष्यों को नहीं परन्तु परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहिए। इसीलिए पवित्रता का जीवन जीने में परमेश्वर ने मेरी सहायता की।

अचानक ही सबकुछ उलटपलट गया। अम्मोनी इस्राएलियों से युद्ध करने के लिए तैयार हुए। इस्राएली जानते थे कि ताकतवर अम्मोनियो से लड़कर जीता नहीं जा सकता है। उन्होंने गिलाद के वृद्ध लोगों से कहाः ''तुम्हारा पिता यिफ्तह जिसे तुमने वेश्या का पुत्र कहकर निकाल दिया था, उसके साथ यहोवा रहता है। इस संकट में केवल वही हमारे आगे हमारा नायक बनकर अम्मोनियों से लड़ सकता है...।'' इस प्रकार गिलाद के वृद्ध लोग पिताजी के पास पहुँचकर अम्मानियों से युद्ध करने के लिए उनका सेनापति होने के लिए जिद करके उन्हें ले गए हैं।

चाहे कुछ भी हो यहोवा का हाथ पिताजी पर था। परमेश्वर ने युद्ध में इस्राएल को विजय दिया...पिताजी के हाथों से...सारी महिमा यहोवा को!

उसे पिता को देखने की उत्कट इच्छा हुई...बचपन से ही वह ऐसी है! पिता से अत्यधिक लगाव रखने वाली लड़की। हमेशा की तरह आज भी जब पिताजी आएँगे तो दौड़कर जाना है, उनके गले लगना है, चुंबन देना है...उसने ठान लिया। लेकिन आज पिताजी हमेशा की तरह अकेले नहीं आएँगे...युद्ध में विजयी होकर आ रहे हैं...उनके साथ बहुत से लोग होंगे...उन सबके सामने ऐसे दौड़कर पिताजी को चूम सकते हैं क्या? अब मैं छोटी लड़की नहीं हूँ। एक वयस्क युवती हूँ। उसने अपने आप को देखा। उसके चेहरे पर लज्जा की लालिमा और होठों पर हल्की मुस्कान आई। अब मैं एक युवती हूँ। एक बार देखने के बाद कोई भी मुड़कर अवश्य देखेगा। इतनी सुंदर हूँ। ओह, इतनी बड़ी होने के बाद क्या मुझे दौड़कर जाकर पिता का स्वागत करना चाहिए? फिर उसने अपने आप से कहा, ''मैं चाहे कितनी भी बड़ी हो जाऊँ, पिताजी के लिए मैं अभी भी बेटी ही हूँ।'' हाँ, पिताजी के

आगमन पर मुझे दौड़कर जाकर उनके गले लगना है...अपनी खंजड़ी बजाकर वह नाचने लगी। वह अपनी खुशी नहीं रोक पा रही थी।

दूर कहीं पैरों की आहट सुनाई दे रही है क्या? पिताजी के पैरों की आहट को वह अच्छी तरह पहचानती है। हाँ, पिताजी आ रहे हैं। विजयी होकर...। वह वाद्ययंत्रों के साथ

नृत्य करने लगी। परिवार के लोगों की ओर से स्वीकृति का आनंद; विजय पाने का आनंद ! समान का सम्मान ! देश का अभिमान !

हर किसी से तिरस्कृत पिताजी आज सभी के सबकुछ बन गए !

वह गाते नाचते हुए पिताजी की ओर दौड़ गई।

उसने उम्मीद के विपरीत चिल्लाने की आवाज सुनी। चिल्ला चिल्लाकर रो रहे, अपने वस्त्र फाड़ रहे पिताजी को देखकर वह ठिठक गई। बुद्धिमान होने के कारण वह जान गईः मैं मरने वाली हूँ।

क्या हुआ? यिफ्तह ने परमेश्वर से वाचा बाँधी थी। यदि मैं युद्ध जीतकर आऊँ तो ''जो कोई मेरे भेंट के लिये मेरे घर के द्वार से निकले वह यहोवा का ठहरेगा, और मैं उसे होमबलि करके चढ़ाऊँगा।'' (न्यायियों 11:31)।

यिफ्तह ने कभी नहीं सोचा था कि उसकी बेटी इस प्रकार सामने आ जाएगी। उसके विचारों में उसकी वे भेड़-बकरियाँ और अन्य पशुएँ थीं जो नाम लेने पर उछलते कूदते हुए दौड़कर आती है! बच्चों के रूप में मेरे और लड़का या लड़की नहीं हैं (न्यायियों 11:34)।

यह दृश्य यिफ्तह के सहने से बाहर था। ''हाय, मेरी बेटी! तू ने कमर तोड़ दी, और तू भी मेरे कष्ट देनेवालों में हो गई है; क्योंकि मैं ने यहोवा को वचन दिया है, और उसे टाल नहीं सकता'' (पद 35)।

परमेश्वर के साथ पिताजी के गहरे संबंध और प्रेम को वह जानती है। यह विलाप परमेश्वर के साथ वाचा के उलंघन में नहीं बदलना चाहिए। यहाँ मुझे कीमत चुकाना ही होगा। मेरे पिताजी के लिए परमेश्वर पत्नी, बच्चों से बढ़कर है। यही बात पिताजी ने हमें सिखाया है। हाँ, उन्हें उनके निर्णय से डिगाना नहीं चाहिए...मुझे मरना है तो मर जाऊँ...उसने कहाः

''पिताजी, मेरे साथ वैसा ही कीजिए जैसा आपने परमेश्वर से कहा।''

बेटी जिसने परमेश्वर के साथ पिताजी के संबंध को समझा! उस पिता ने अत्यधिक हृदय वेदना के साथ पहचाना कि भले ही अपनी पुत्री का बलिदान करना पड़े, परमेश्वर के साथ बाँधी गई वाचा उनके लिए एकलौती पुत्री से बढ़कर है।

अपने पिता को युवा पुत्री द्वारा दिया गया उत्तर ध्यान देने योग्य है।

''फिर उस ने अपने पिता से कहा, मेरे लिये यह किया जाए, कि दो महीने तक मुझे छोड़े रह, कि मैं अपनी सहेलियों सहित जाकर पहाड़ों पर फिरती हुई अपनी कुँवारीपन पर रोती रहूँ। उस ने कहा, जा। तब उस ने उसे दो महिने की छुट्टी दी; इसलिये वह अपनी सहेलियों सहित चली गई, और पहाड़ों पर अपनी कुँवारीपन पर रोती रही। दो महीने के बीतने पर वह अपने पिता के पास लौट आई, और उस ने उसके विषय में अपनी मानी हुइ मन्नत को पूरी किया। और उस कन्या ने पुरूष का मुँह कभी न देखा था (न्यायियों 11:37-39।

मरने से पहले उसे सहेलियों को बताना था कि वह कुँवारी कन्या है और किसी पुरुष के साथ संसर्ग नहीं हुआ है। उसने अपनी जिम्मेदारी को जाना कि पवित्र जीवन के

बारे में अन्य युवतियों को बताना चाहिए। इसीलिए तो इस्राएली कन्याएँ उस दिन को मनाया करती हैं (पद 40)।

युवावस्था प्रलोभनों और इच्छाओं आदि का समय होता है। किन्तु बाइबल में यिफ्तह की बेटी की कहानी हमारे मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि उस प्रकार आदर्श जीवन जीने के लिए लिखी गई है। यह बात एक कन्या के लिए गर्व की बात है कि उसने किसी पुरुष को नहीं जाना है; बहुत बड़ी गवाही है! यह बात इस दौर में और उस दौर में भी समान रूप से प्रासंगिक है।

यह परमेश्वर की योजना और अभिलाषा है कि स्त्री और पुरुष विवाह के समय 'कुँवारे' हों। जब विवाह के समय पासबान दंपतियों के हाथों को आपस में मिलाते हैं तभी वे एक होते हैं। तब तक स्त्री और पुरुष को अलग अलग रहकर जीवन बिताना है। यही परमेश्वर की ओर से नियुक्त है।

माता पिताओं को चाहिए कि यह बात बहुत सख्ती के साथ अपने बच्चों को सिखाएँ। उनकी जवानी की 'चाल' पर ध्यान देना चाहिए। बेकाबू जीवन हमारे लिए नहीं है। 'आधुनिकता की अंधी दौड़' में तो हमें शामिल होना ही नहीं है। उत्तम चरित्र और पवित्रता के विषय में यिफ्तह की पुत्री का उदाहरण हमारे लिए काफी है। मुझे 'पुराने ख्यालों वाली' कह लीजिए। मुझे गर्व ही होगा। मैं निश्चय दिलाती हूँ कि यदि ऐसा है तो परमेश्वर आपको पवित्र जीवन साथी प्रदान करेंगे।

9 युवाओं के लिए एक संदेश

तीतुस 2:4, 5 - ''...जवान स्त्रियों को चितौनी देती रहें, कि अपने पतियों और बच्चों से प्रीति रखें। और संयमी, पतिव्रता, घर का कारोबार करनेवाली, भली और अपने अपने पति के आधीन रहनेवाली हों, ताकि परमेश्वर के वचन की निन्दा न होने पाए।''

परमेश्वर के वचन का यह भाग हमें यह समझाने के लिए पवित्रात्मा की ओर से दिया गया स्पष्ट निर्देश है कि जवान स्त्रियों को परिवार, समाज और कलीसिया में किस प्रकार जीना है। हमें वचन के इस भाग से समझना चाहिए कि अपने बच्चियों का पालन पोषण किस प्रकार करना है। आगे चलकर उन्हें किसी पुरुष की पत्नी बनना है। माता पिता के साथ रहते हुए ही उन्हें इसकी तैयारी मिलनी चाहिए।

अनुशासन, समर्पण और अधीनता जैसी बातें उन्हें अपने परिवार से ही सीखना है। पति का अनुसरण, सम्मान करने और अधीन रहने वाली 'पत्नी' जिस घर में होती है वह स्वर्ग समान होता है। इसलिए ऐसे घरों के बच्चे यही सब देखते हुए बड़े होंगे। ऐसी लड़कियाँ दूसरे घरों में जाने पर भी इसी शैली में जिएँगे।

अपने इस बाइबल भाग में पहली बात हम यह देखते हैं कि स्त्रियों को पतियों से प्रीति रखने वाली होनी चाहिए। अर्थात् पतियों को प्रिय जाननेवाली हों। लेकिन यदि इस पीढ़ी की किसी ऐसी लड़की का विवाह जबरदस्ती करवा दिया जाए जो सोचती है पति की आवश्यकता हीं नहीं है, तो वह किस प्रकार पति से प्रीति रखने वाली बनेगी? इसलिए माता पिताओं को अपनी लड़कियों को उम्र बढ़ने के साथ साथ विवाह के बारे में सोचना सिखाना है। एक अच्छे पति के लिए, एक ईश्वरीय परिवार पाने के लिए प्रार्थना करने हेतु लड़कियों को प्रशिक्षित करना है।

हमें सोचना है कि क्यों इस पीढ़ी की कई लड़कियाँ विवाह के नाम से ही 'दूर भागती' हैं। कई बार इसका कारण स्वयं के माता पिताओं का आदर्शविहीन जीवन और परिवार में उसके द्वारा अनुभव की जाने वाली असुरक्षा की भावना है। परिवार बच्चों के लिए स्वर्ग समान होना चाहिए। परिवार मधुर संगीतमय होना चाहिए। उसमें बच्चे स्वतंत्रता और परमेश्वर की निकटता का अनुभव कर सकें। तभी उनमें परिवार के प्रति अच्छे विचार उत्पन्न होंगे। इस बात में माता पिताओं का भाग बहुत बड़ा है।

जिस प्रकार परमेश्वर का वचन सिखाता है कि स्त्रियों को पतियों से प्रीति रखने वाली होनी चाहिए, उसी प्रकार यह भी सिखाता है कि वे पुत्रों से भी प्रीति रखने वाली हों। परमेश्वर प्रथम परिवार को जो पहली आशीष दी वह ''फूलो-फलो, और पृथ्वी में भर जाओ'' था। बच्चे ही एक परिवार को रमणीय बनाते हैं। किंतु इन दिनों अधिकांश लड़कियाँ विवाह के बाद कहती हैं कि 'बच्चे नहीं चाहिए', या 'अभी नहीं चाहिए'। यह परमेश्वर की योजना से इंकार करना है। कुछ लोग तो गर्भ में बच्चे के अस्तित्व में आने पर उसे नष्ट करने (गर्भपात) के लिए तैयार हो जाते हैं। यह हत्या के बराबर है। बच्चे पारिवारिक जीवन की आशीष और ऐश्वर्य हैं जो परमेश्वर यहोवा का दान हैं।

यदि स्त्रियों को संतान प्रिय होना है तो उन्हें विवाह से पहले से ही बच्चों से प्यार करना सीखना चाहिए। इसका प्रशिक्षण उन्हें माता पिता के साथ अपने घर में रहते हुए ही मिलना चाहिए। छोटे बच्चों को बहलाने, खिलाने और नहलाने माता पिता को बड़े बच्चों को प्रशिक्षित करना चाहिए। बड़े होते हुए वे अन्य बच्चें के साथ मिलें जुलें। बड़े हो चुके बच्चे कलीसिया के अन्य बच्चों की देखभाल करते हुए बड़े हों। ऐसे बच्चे बड़े होने पर वे संतान प्रिय होकर जी सकेंगे।

युवतियों की सबसे बड़ी विशेषता 'सुबोध' है। यह तो 'फ्रेंडशिप' का दौर है। सोशल मीडिया सब स्तरों पर हावी है। लिंगभेद के बिना चलने वाले 'चैटिंग और पैटिंग' पर निश्चय ही रोक लगाई जानी चाहिए। इस विषय में संसार की रीत नही मानना चाहिए। यदि लड़कियों को इस विषय में 'अनुशासन' के बिना बड़ी होने दिया जाए तो वे विवाह

के बाद भी यह सोचे बिना 'चैटिंग और पैटिंग' करते फिरेंगे कि उनके साथी को यह पसंद आ रहा है या नहीं। स्वस्थ मित्रता ठीक है। किन्तु हमें होशोहवास में रहना चाहिए। परिवार एक इकाई है। पति और पत्नी के एक होने की इकाई। उसमें किसी तीसरे को कोई स्थान नहीं होना चाहिए। तीसरा व्यक्ति यीशु मसीह है। पति और पत्नी के बीच रहकर परिवार को बनानेवाला यीशु। अगली बात पौलुस स्मरण दिलाता है कि हमारी युवतियाँ पतिव्रता हों। पिछले अध्याय में हमने यिफ्तह की पुत्री की कथा देखा था। अपने बच्चियों के लिए हम चाहे कितनी भी संपत्ति इकट्ठा कर लें, विवाह के समय वह सब उन्हें दे दें तो भी वह उनकी

सबसे बड़ी संपत्ति नहीं है - यह पतिव्रतत्व है। किसी स्त्री की पवित्रता , शुद्ध स्वभाव ही उसे एक पूर्ण स्त्री बनाती है।

संसार का हरेक पुरुष यही चाहता है कि उसकी दुल्हिन 'कुँवारी' और पतिव्रता

हो।

युवतियाँ 'बाड़ वाले बगीचे' और 'घेर वाले कुँए' के समान होते हैं। उस बाग में किसी को अनधिकृत प्रवेश नहीं है। उस कुँए किसी और को जल ग्रहण करने की अनुमति नहीं है।

पौलुस यह भी कहता है कि युवतियों को घर संभालने वाली होना चाहिए। अर्थात् ससुराल पहुँचने पर वहाँ के सारे कामों को करने की दक्षता उसमें हो। इसका प्रशिक्षण उसे अपने घर में ही मिलना चाहिए। स्वयं भोजन बनाने, घर की साफ सफाई करने, कपड़े धोने, बाजार जाने, बैंक का लेनदेन करने जैसे कामों में उसे सक्षम होना चाहिए। वाहन चलाना, आवश्यक सिलाई के काम आदि की जानकारी रखना अच्छा होता है। इन सब बातों का प्रशिक्षण उन्हें अपने घर में रहते हुए ले लेना चाहिए। माता पिताओं को उन्हें पेड़ पौधे लगाना, साग सब्जी उगाना आदि सिखाना चाहिए।

बच्चों को 'दयालु' होकर बड़ा होना चाहिए। माता पिता जानते हैं कि बच्चों को अच्छी तरह अध्ययन करना और ऊँचे अंक प्राप्त करना चाहिए। किन्तु दूसरों के साथ उनका व्यवहार कैसा है? क्या वे साथियों का दुखदर्द महसूस कर पाते हैं? उदाहरण के लिए, क्या आपके बच्चे के पास यह देखने के लिए आँखें हैं कि उसका कोई सहपाठी फ ीस चुकाने के लिए परेशान हो रहा है? यदि आपका बच्चा यह जानकर यह बात दयापूर्वक आपको बताता है तो बिना किसी को बताए उस बच्चे की सहायता करने के लिए आपको तैयार होना चाहिए।

हमारे बच्चे समाज के प्रति करुणा का भाव रखते हुए बड़े होने वाले बच्चे होने चाहिए। यदि ऐसा होगा तो विवाह के बाद भी आपकी बेटी एक सामर्थी युवती होगी। जिस प्रकार हम नीतिवचन में देखते हैं कि वह दीनों के लिए अपनी मुट्ठी खोलती है। दरिद्रों की हाथ बढ़ाती है।

पौलुस कहता है कि स्त्रियाँ पतियों के अधीन हों। कई परिवारों के विघटन का एक अहम् कारण स्त्रियों द्वारा अधीनता स्वीकार नहीं करना है। यदि स्त्री को पति के अधीन होना है तो उसे यह देखते हुए बड़ी होना है कि उसकी माँ उसके पिता के अधीन रहती है। कहावत भी है कि 'यथा माता तथा पुत्री।' यदि उसके परिवार में माँ ही शासन करती है तो ससुराल में जाकर वह पति और ससुरालवालों पर शासन करेगी। किन्तु यदि एक लड़की की माँ पति की अधीनता स्वीकार करने वाली पत्नी है तो वह लड़की पति की प्रिया बनकर, पति के अधीन दयालु रहकर गृहकार्यों को करते हुए अच्छे मन से रहेगी। वह घर धरती पर का स्वर्ग होगा।

10 फलवंत दाखलता सी पत्नी

''सुन, जो पुरूष यहोवा का भय मानता हो, वह ऐसी ही आशीष पाएगा''
(भजन संहिता 128:4)।

इससे पहले वाले पद में हम देखते हैं कि एक पुरुष की आशीषित दशा क्या होती है।

''तू अपनी कमाई को निश्चय खाने पाएगा; तू धन्य होगा, और तेरा भला ही होगा। तेरे घर के भीतर तेरी स्त्री फलवन्त दाखलता सी होगी; तेरी मेज के चारों ओर तेरे बालक जलपाई के पौधे से होंगे।''

एक पुरुष की आशीष उसकी पत्नी और उसके बच्चे होते हैं; न कि उसकी संपत्ति और उपाधियाँ। आशीषित पत्नी घर के भीतर दाखलता के समान होती है। दाख हमें खुशी देती है। परिवार में पत्नी प्रसन्नचित्त होगी। घर में रहनेवालों और घर में आनेवालों को वह प्रसन्नता देगी। आशीषित पत्नी घर की रोशनी होती है। उस घर में आने में कोई भी खुशी महसूस करेगा। क्योंकि वे उस घर की स्वामिनी की ओर से आकर्षक, गर्मजोशी से भरपूर स्वागत की आशा कर सकता है। आशीषित पुरुष के बच्चे भी आशीषित ही होते हैं। वे जैतून के पौधों के समान होंगे। जैतून समृद्धि और शांति का प्रतीक होता है। विजय का मुकट बनाने में भी जैतून की शाखाओं का उपयोग होता था।

आशीषित बच्चे घर की संपत्ति होते हैं। वे हमारे विजय मुकुट हैं। वहाँ शांति का वास होगा। आशीषित परिवारों में भाईयों में आपस में लड़ाई झगड़े नहीं होते हैं। वे परस्पर प्यार और आदर करनेवाले होंगे। किंतु परिवार में इन आशीषों को लाने में मुख्य भूमिका पुरुष की होती है. ''क्या ही धन्य है हर एक जो यहोवा का भय मानता है, और उसके मार्गों पर चलता है'' (भजन 128:1)!

परिवार का पुरुष परमेश्वर के भय में जीनेवाला होना चाहिए। यहोवा परमेश्वर ही उसके मार्गों को नियंत्रित करनेवाला होना चाहिए। हाँ, यहोवा का भय माननेवाले और उसके मार्गों पर चलनेवाले पुरुष का परिवार ही आशीषित परिवार होता है। ऐसे किसी व्यक्ति की पत्नी घर के भीतर फलवन्त दाखलता सी होगी; और उसके बच्चे उसकी मेज के चारों ओर जलपाई के पौधे से होंगे। किन्तु इस घर के भीतर भी पति और पत्नी तथा माता पिता और बच्चों के बीच परस्पर संबंध में एक क्रम होता है।

''मसीह के भय से एक दूसरे के आधीन रहो।''

''हे पत्नियों, अपने अपने पति के ऐसे अधीन रहो, जैसे प्रभु के।''

''क्योंकि पति पत्नी का सिर है जैसे कि मसीह कलीसिया का सिर है; और आप ही देह का उद्धारकर्ता है।''

''पर जैसे कलीसिया मसीह के आधीन है, वैसे ही पत्नियाँ भी हर बात में अपने अपने पति के आधीन रहें।''

''हे पतियों, अपनी अपनी पत्नी से प्रेम रखो, जैसा मसीह ने भी कलीसिया से प्रेम करके अपने आप को उसके लिये दे दिया।'' (इफिसियों 5:21-25)।

128 वें भजन में हमने यहोवा का भय मानने की आवश्यकता को देखा। वहाँ पौलुस कहता है कि न केवल यहोवा (मसीह) का भय मानना है बल्कि उस भय में परस्पर अधीन भी रहना है।

इसके पहले के पदों में हम देखते हैं कि कलीसिया में यह अधीनता होनी चाहिए। आगे की ओर पढ़ने पर हम पाते हैं कि न केवल कलीसिया में बल्कि घर में भी परस्पर यह अधीनता (आदर) होनी चाहिए। किन्तु भय केवल मसीह का करना चाहिए।

घर के सभी मसीह का भय रखनेवाले होने चाहिए। माता, पिता, बच्चे सभी को मसीह के भय - उसकी उपस्थिति के अहसास - में रहनेवाले होने चाहिए। प्रत्येक क्षण हमारा जीवन ऐसा होना चाहिए मानो सबकुछ मसीह देखा रहा है, जान रहा है।

इस प्रकार परमेश्वर के भय में जीनेवाले एक परिवार का सिर पति होता है। उसके नीचे अनुशासन के साथ पत्नी है।

''हे पत्नियों, अपने अपने पति के ऐसे अधीन रहो, जैसे प्रभु के'' (22 पद)।

यहाँ बताया गया है कि पत्नी को किस प्रकार पति के अधीन रहना है; ''जैसे प्रभु के''...पौलुस कहता है कि जब आप पति के अधीन होते हैं तो आप मसीह के अधीन होते हैं।

वास्तव में यहाँ पर पारिवारिक संबंध की तुलना मसीह और कलीसिया के संबंध से की गई है।

ध्यान दीजिए कि कुरिन्थियों की पत्री में पौलुस क्या कहता है।

''हर एक पुरुष का सिर मसीह है: और स्त्री का सिर पुरुष है: और मसीह का सिर परमेश्वर है'' (1 कुरिन्थियों 11:3)।

यदि इफिसियों की पत्री में हम देखते हैं कि स्त्री का सिर पुरुष है तो यहाँ देखते हैं कि पुरुष का सिर मसीह है। अर्थात् पौलुस कहता है कि स्त्री और पुरुष को हर प्रकार से और हर समय मसीह का आज्ञापालन करना चाहिए। पुरुष को मसीह का आज्ञापालन करते हुए देखकर ही स्त्री पुरुष की बात मानना सीखेगी। लेकिन पुरुष को किससे आज्ञा मानना सीखना है? यह नीचे बताया गया है।

'मसीह का सिर परमेश्वर है।'

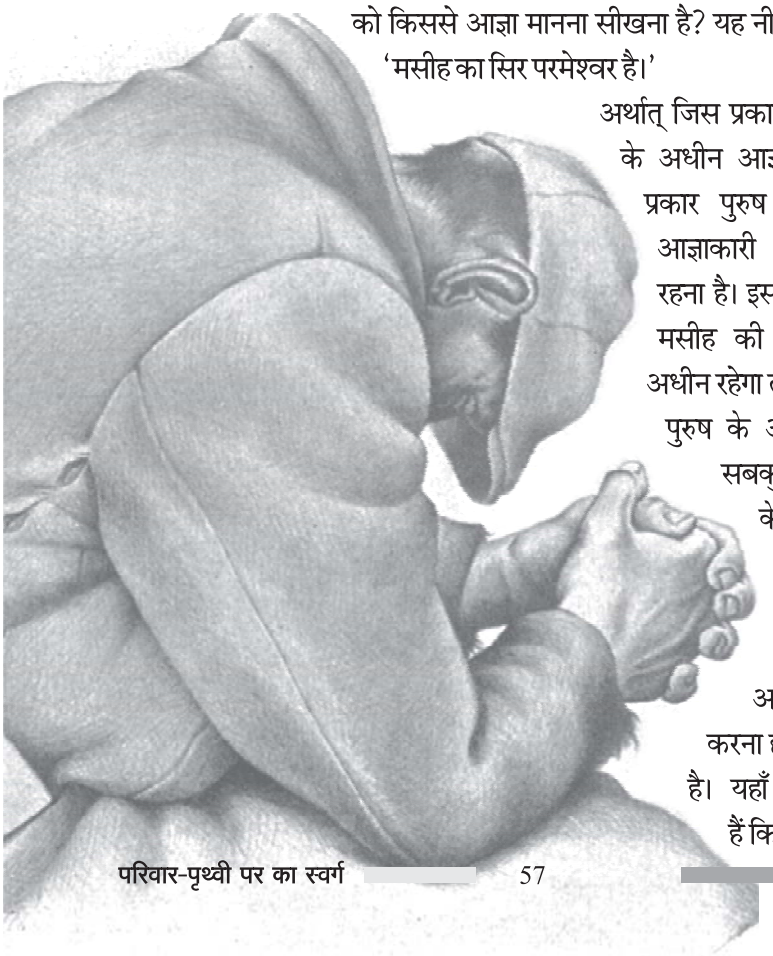

अर्थात् जिस प्रकार मसीह परमेश्वर के अधीन आज्ञाकारी रहा, उसी प्रकार पुरुष को मसीह का आज्ञाकारी बनकर अधीन रहना है। इस प्रकार जब पुरुष मसीह की आज्ञाकारिता के अधीन रहेगा तो यह देखकर स्त्री पुरुष के अधीन होगी। तब सबकुछ मसीह के भय के अधीन होगा । जब सिर और शरीर की बात की जाती है तब अधीनता की बात करना ही काफी नहीं होता है। यहाँ वचन में हम पढ़ते हैं कि पति पत्नी का सिर

है जैसे कि मसीह कलीसिया का सिर है; जैसा मसीह भी कलीसिया के साथ करता है (इफिसियों 5:29)। अर्थात् जिस प्रकार अधीन होना शरीर का उत्तरदायित्व है उसी प्रकार 'उद्धारकर्ता बनना' सिर का उत्तरदायित्व है।

जब हमारा हाथ आग के पास जाता है तब हाथ को उससे दूर रहने का निर्देश देनेवाला सिर ही होता है। सिर हरेक क्षण शरीर के हरेक अंग को निर्देश देते रहता है। उसके अधीन होने के कारण ही शरीर के अंग सुरक्षित रहते हैं। मसीह कलीसिया के हरेक अंग को हरेक क्षण निर्देश देते ही रहता है। उनके अधीन होना सुरक्षा है। अधीन न होना जोखिम है। पारिवारिक जीवन में भी पति इसी प्रकार होशोहवास के साथ पत्नी को निर्देश देते रहना चाहिए।

किन्तु किस प्रकार पति होशोहवास के साथ परिवार के लिए आवश्यक निर्देश दे पाता है ? यह केवल तभी होता है जब मसीह पुरुष का सिर बना रहे; पुरुष मसीह से निर्देश पाकर अनुसरण करता है; मसीह के निर्देशों को परिवार के साथ साझा करता है। यदि इस क्रम में चूक जाएँ तो सबकुछ परेशानी में पड़ जाता है। धरती पर वह घर स्वर्ग समान होता है जिसमें हर बात में मसीह का आज्ञाकारी पुरुष (पति) और हर बात में पति की आज्ञाकारी पत्नी रहती हो।

11 अच्छी बहू

बाइबल में रूत और नाओमी की कहानी पर ध्यान दीजिए: पूरी एक पुस्तक रूत के नाम से है । बाइबल की प्रत्येक घटना का वर्णन हमसे इसलिए किया गया है ताकि उनके समान अनुभवों में से गुजरने वालों को शिक्षा मिल सके।

बाइबल के पात्र सामान्य लोग हैं - हमारे समान लोग...जिनका हम अनुकरण कर सकते हैं! इस प्रकार के लोगों के जीवनचरित्र का वर्णन बाइबल में इसलिए किया गया है ताकि उनके माध्यम से हम जीवन के सबक सीख सकें।

ये बातें हमारी 'चेतावनी के लिए' लिखी गईं हैं कि हम उनकी बुराईयों पर न चलें (1 कुरिन्थियों 10:11)। किन्तु बाइबल के अच्छे पात्र - हमारे शब्दों में कहें तो विजय पाने वाले - अपना इतिहास इसलिए लिखें हैं ताकि हम उनके अच्छे आदर्श का अनुकरण करें!

यहाँ हमारा बाइबल भाग रूत पहला अध्याय 14 वें पद से 19 वें पद के प्रथम भाग तक है। इसे 3 स्तरों में बाँट सकते हैं।

पहला चरणः 14 और 15 पद। ''तब वे फिर से रो उठीं; और ओर्पा ने तो अपनी सास को चूमा, परन्तु रूत उस से अलग न हुई। तब उस ने कहा, देख, तेरी जिठानी तो अपने लोगों और अपने देवता के पास लौट गई है; इसलिए तू अपनी जिठानी के पीछे लौट जा।''

दूसरा चरणः पद 16,17,18। ''रूत बोली, तू मुझ से यह बिनती न कर, कि मुझे त्याग वा छोड़कर लौट जा; क्योंकि जिधर तू जाए उधर मैं भी जाऊँगी; जहाँ तू टिके वहाँ मैं भी टिकूँगी; तेरे लोग मेरे लोग होंगे, और तेरा परमेश्वर मेरा परमेश्वर होगा; जहाँ तू मरेगी वहाँ मैं भी मरूँगी, और वहीं मुझे मिट्टी दी जाएगी। यदि मृत्यु छोड़ और किसी कारण मैं तुझ से अलग होऊँ, तो यहोवा मुझ से वैसा ही वरन उस से भी अधिक करे। जब उस ने यह देखा कि वह मेरे संग चलने को स्थिर है, तब उस ने उस से और बात न कही।''

तीसरा चरणः पद 19 का प्रथम भाग। ''सो वे दोनों चल निकलीं और बेतलेहेम को पहुँची।''

हम पारिवारिक जीवन के एक एक भाग का अध्ययन करते आ रहे थे। हमने पति-पत्नी के संबंध का अध्ययन किया। किन्तु पति के घर में आने वाली एक स्त्री केवल पत्नी बनकर नहीं बल्कि बहू बनकर भी आती है। 'सास और बहू' का संबंध बहुत अधिक ध्यान दिए जाने योग्य संबंध है। कई परिवारों में शिथिलता के मख्य कारणों में से एक इस क्षेत्र मे पराजय है। यदि कोई ऐसा क्षेत्र है जिसपर कोई हाथ डालना, उपदेश देना या उपदेश सुनना पसंद नहीं करता है तो वह यही 'क्षेत्र' है।

एक स्त्री के पत्नी बनने के प्रथम क्षण में ही वह पति पत्नी नामक एक इकाई में प्रवेश करती है। लेकिन इसके साथ ही वह एक 'समुदाय ' का भाग भी है। वहाँ पर पति के माता पिता, भाई बहन, उनके पति पत्नी, जैसे कई लोग होंगे। इस सच्चाई को स्वीकार करना ही होगा। भारतीय संस्कृति और भारतीय पृष्ठभूमि हमेशा से ही संयुक्त परिवार की रही है! किन्तु जब हमारे लोग पश्चिमी देशों में प्रवासी बने, तब वे अपनी संस्कृति और अस्तित्व को भूल गए। वे अन्य संस्कृतियों के वश में होकर माता पिताओं को 'बाहर' कर दिए या माता पिताओं ने इन्हें 'बाहर' कर दिया। लेकिन यहाँ यह कहानी हमें सिखाती है कि बाइबल की संस्कृति क्या है, परमेश्वर की परिकल्पना का परिवार किस प्रकार का है। नाओमी बैतलहम में जन्मी और पली बढ़ी स्त्री है। अपनी बात कहें तो मान लीजिए भारत में जन्मी है।

जब नाओमी के पति को अपना देश तृप्त नहीं लगा तो 'मोआब' में प्रवासी बन गए। आप यह तर्क दे सकते हैं कि बैतलहम में अकाल पड़ा था। हाँ! हमारे देश में अवसर की कमी के कारण ही तो हमारे लोग विदेश गए !!! वहाँ पर, नाओमी के पति और उसके

दो विवाहित बेटे मर जाते हैं। नाओमी की दो निःसंतान बहुएँ भी उसके साथ विधवा हो जाती हैं।

इस पृष्ठभूमि में नाओमी दोनों से गंभीरतापूर्वक कहती है। तुम लोग अपने मायके जाकर को पुर्नविवाह करके जियो। मैं अपने देश वापस जाकर बसूँगी ! पहला चरण ओर्पा नामक बहू की प्रतिक्रिया है। उसे दुःख तो था परन्तु वह वापस लौट गई।

नाओमी ओर्पा के बारे में अपनी दूसरी बहू से कहती है, ''देख, तेरी जिठानी तो अपने लोगों और अपने देवता के पास लौट गई।'' संभव है कि जब वे एक साथ रहते थे, तो नाओमी ने इन दो मोआबी स्त्रियों को बताया होगा कि एक जीवित ईश्वर है और ईश्वरीय परंपरा को उन दोनों बहुओं के साथ साझा किया हो। वे दोनों ही अन्यजातीय पृष्ठभूमि से थीं। उसने आत्मिकता को दोनों में समान रूप से उँडेला। लेकिन जब अवसर आया तब एक अपने लोगों और देवताओं के पास'' वापस लौट गई। रूत की कहानी ऐसी स्थिति में परमेश्वर और सास से मिलकर रहने की कहानी है । उसने अपना स्वार्थ सुख नहीं तलाशा। उसने अपने देश लौटकर अपने 'देवता' की उपासना करना नहीं चाहा। वह अपनी सास के साथ बनी रही। सास का जीवित परमेश्वर उसका भी परमेश्वर बन गया। अब वह पीछे नहीं हट सकती है !

पति पत्नियों की आपसी जिम्मेदारियों के बारे में हम विवाह की आराधना के दौरान बहुत सी बातें सुनते हैं। लेकिन यह बात अक्सर सुनने में नहीं आती है कि ससुराल के अन्य लोगों के साथ नई बहू का और परिवार की नई सदस्या के साथ परिवार के लोगों का व्यवहार कैसा होना चाहिए ! अर्थात् क्या हमें इस बारे में और अधिक सीखने और सिखाने की आवश्यकता नहीं है कि पति के माता पिताओं और भाई बहनों के साथ - विशेषकर सासः बहू, ननदः भाभी के बीच - रिश्ता कैसा हो? इसमें सास और बहू के संबंध के लिए नाओमी और रूत के रिश्ते से बढ़कर उत्तम उदाहरण बाइबल में और कोई

नहीं है। जब परमेश्वर के पवित्रात्मा ने इस पुस्तक को बाइबल में शामिल किया तब निश्चय ही उसका यह उद्देश्य रहा होगा कि हमें इस रिश्ते के व्यवहारिक पहलुओं को समझाए।

पहली बात, नाओमी की ही बात लीजिए! जीवन में जब अकथनीय कष्ट और हानियाँ आ पड़ी, पति और पुत्रों का असमय वियोग सहना पड़ा, तो नाओमी ने यह नहीं सोचा कि बहुओं को भी इसमें शामिल करना है, बल्कि उसने चाहा कि वे किसी न किसी प्रकार स्वतंत्र हो जाएँ। नाओमी का कहना है कि यह पीड़ा मैं अकेले ही सह लूँगी, ''हे मेरी बेटियों, लौट जाओ'' (रूत 1:11)! देखिए, कितनी नम्र सास है नाओमी...यह सास सभी सासों के लिए आदर्श है जिसने सच्चे मन से चाहा कि उसकी बहुओं को कष्ट न हो और उन्हें एक उज्वल भविष्य मिले! उनकी नजर में बहुएँ बेटियों के समान या उनसे भी बढ़कर थीं। यही ईश्वरीय भावना है! सभी सासों को यह सबक सीखना चाहिए!!

नोओमी से रूत जो बातें कहती है वह वही बातें हैं जो प्रायः एक पत्नी से कहती हैः। रूत नाओमी से विनती करती है कि ''तू मुझ से यह बिनती न कर, कि मुझे त्याग वा छोड़कर लौट जा'' (रूत 1:16)। अर्थातृ पति के न होने पर भी आजीवन सास की देखभाल करने का उसका निर्णय सास के प्रति तरस नहीं बल्कि उसका सौभाग्य है! सास उसके लिए एक मजबूरी नहीं बल्कि उनके साथ रहना रूत के लिए धन्य अनुभव है!

आत्मिक लोगों के लिए रूत निश्चय ही एक चुनौती है, नई पीढ़ी सासों को मजबूरी के रूप में देखती है। एक पत्नी का पति यह कहना हम समझ सकते हैं कि

''जिधर तू जाए उधर मैं भी जाऊँगी; जहाँ तू टिके वहाँ मैं भी टिकूँगी।'' किन्तु एक विधवा और बूढ़ी सास से जब रूत यह कहती है कि ''जहाँ तू मरेगी वहाँ मैं भी मरूँगी, और वहीं मुझे मिट्टी दी जाएगी'' तो यह बात भावविभोर होकर ही सुनी जा सकती है (1:17)।

रूत यह कहती हैः मेरा संबंध केवल मेरे पति से ही नहीं था। यदि ऐसा होता तो पति के मरने पर मैं सबकुछ छोड़कर जा सकती थी। किन्तु विवाह के द्वारा मैं केवल पति के साथ ही नहीं बल्कि उसके परिवार, उसके परमेश्वर और उसके लोगों के साथ भी बाँधी गई हूँ।

अपने लोगों, अपने परिवार और अपने ईश्वर के प्रति अपने भावनात्मक संबंध को तोड़कर मैं इस घर में आई थी। अब मेरे लोग मोआबी नहीं हैं। मोआबी देवताएँ मेरे ईश्वर नहीं हैं। जब से मैं अपने पति के घर में आई हूँ तब से मेरे पति के - मेरी सास के भी - लोग मेरे लोग हैं, मेरे पति का परमेश्वर मेरा भी परमेश्वर है!

विवाहित होनेवाली स्त्री का भावनात्मक संबंध अब से उसके मायकेवालों, लोगो या देश से नहीं होना चाहिए। वह सब पुरानी बातें हैं! अब वह एक नए घर की सदस्या है। अब उसका भावनात्मक संबंध पति और उसके परिवार तथा वहाँ की पृष्ठिभूमि और परिस्थिति आदि के साथ है।

ऐसे लोग होंगे जो सदेंह करते हों कि क्या ये बातें 'आजकल' संभव है। किन्तु इस बात में संदेह बिल्कुल भी नहीं है कि यही ईश्वरीय आदर्श है। ईश्वरीय आदर्श का अनुकरण करने वाला परिवार बिखरता नहीं है। वे आशीषित होंगे!

परिशिष्ट

हे माता पिताओं
अपने बच्चों के लिए

पास्टर ने अब तक मुझे नहीं देखा है।
किन्तु मैं हर रविवार को पास्टर को देखी हूँ। यह शिकायत
कोयंबटूर सी.एम.एस. कॉलेज में पढ़नेवाली एक लड़की की है ।
''मैं एक ऐसी कलीसिया में जाती हूँ जहाँ अलग अलग कालेजों में पढ़नेवाले
सौ से अधिक बच्चे आते हैं। वहाँ पास्टर ऐक्टिव बच्चों से मिलते और
कलीसिया में वे नजर में रहते हैं। लेकिन मुझसे अब तब परिचय भी नहीं पूछा गया है।''
बाहर से आकर नर्सिंग पढ़ने वाली एक अन्य लड़की ने अपने व्यथा व्यक्त की। आलोचनाओं के भय से अधिक 'अनुभव' साझा नहीं कर रही हूँ।

अध्ययनवर्ष प्रारंभ हो चका है। 10 वीं कक्षा तक लड़कियाँ मम्मियों का पल्लू थामे 'सिकुड़ी सकुची' रहेंगी। उनके समान संत और कोई नहीं होगा। लड़के भी 10 वीं कक्षा तक शांत ही रहते हैं। ये 10 वीं और 12 वीं पार करते ही गोलकार पृथ्वी से समतल धरती की ओर लंबी छलाँग लगाते हैं। यौवन की आकाँक्षाएँ भी साथ देने के लिए आ जाती हैं। वे नहीं चाहते कि कोई उन पर ध्यान दे। एक प्रकार की स्वतंत्रता... ! स्वतंत्र विचरण... ! मानो पंछी को पिजंरा खोलकर उड़ा दिया गया हो ! नीवें ढा दी जाएँ तो धर्मी

जन क्या करेगा? क्या करेगा?

परिवार ही पहला विद्यालय होता है। उन्हें पहला सबक माता पिताओं से ही सीखना है। सत्य के वचन में उनका पालन पोषण कर 'नींव' सुदृढ़ करना चाहिए। यदि नींव न हो तो कोई भी भवन गिर जाएगा। हमारी पीढ़ी के पतन का पहला कारण इस प्रकार की नींव रहित पालन पोषण है।

पाँच वर्ष की उम्र से पहले ही नींव डाल दी जानी चाहिए।

बाइबल की कहानियाँ सुनाते हुए सुलाना - संभव हो तो सचित्र बाइबल पढ़ना और चित्र दिखाना कर सकते हैं। इस प्रकार हम उनके जीवन को विनाश से बचाना प्रारंभ कर सकते हैं। इसी उम्र में हम उन्हें संडे स्कूल भेज सकते हैं।

जब हम संडेस्कूल में पाठ और पद याद करने और सभी बातों में 'प्रथम' आने ध्यान केंद्रित करते हैं तो हमें उन्हें पतन की पहली सीढ़ी पर धकेल रहे हैं।

यह पता करना माता पिताओं का उत्तरदायित्व है कि उन्होंने संडेस्कूल में 'क्या सीखा?' लेकिन अक्सर हम यह भूल जाते हैं कि बचपन से ही हम उन्हें 'प्रतिद्वंदी' बना रहे हैं। हो सकता है कि वे विद्यालय और संडेस्कूल में प्रथम हों। लेकिन जीवन में वे पराजय की प्रथम सीढ़ी पार करते हैं। पहला चरण पूर्ण करते हैं। क्योंकि बचपन में ही हम बालमन में 'प्रतिद्वंदिता,' करके जीतने का जहरीला बीज बो रहे होते हैं। वह वहाँ उगने लगता है। उनमें यह भावना बढ़ने लगती है कि सबको पैरों पर गिराना है और अपना सिर ऊँचा करते जाना है और इसके साथ ही साथ उनमें ईर्ष्या, जलन, ढिठाई बढ़ता जाता है और जय पाने की भावना को परोक्ष रूप से जल और खाद देते हैं। हम उन्हें आराधना सभाओं से दूर रहना सिखा रहे हैं। पढा पढ़ाकर हम उन्हें बड़े प्रतिद्वंदी बना रहे हैं।

हमारे भीतर प्रश्न उठता हैः क्या उन्हें अच्छी तरह अध्ययन नहीं करना चाहिए? क्या पढाई करना गलत है? निश्चय ही पढ़ाई करना चाहिए। हम चाहे कुछ भी करें - चाहे खाएँ या पिएँ, पढ़ाई करें या फिर भोजन करें, घर की सफाई करें या कपड़े साफ करें - पिता परमेश्वर को हममें महिमा मिलनी चाहिए। यदि कुछ भी करने से हममें परमेश्वर की महिमा होनी है तो वह कार्य परमेश्वर को समर्पित होना चाहिए। सौ प्रतिशत पूर्ण होना चाहिए। अध्ययन भी परिपूर्ण होना चाहिए। अध्ययन करना माता पिता या गुरुजनों के लिए नहीं होना चाहिए। परमेश्वर और उसकी महिमा के लिए होना चाहिए। इसलिए संपूर्ण (परफेक्ट) होना चाहिए। इतना परफेक्ट कि सौ में से सौ मिलें!

संडेंस्कूल अध्ययन सामग्री में परिवर्तन लाना भी अच्छा होगा। यदि यीशु का जीवन, उसका बचपन, पालनपोषण, मनोभाव, सेवा, उपदेश आदि सिखाते हुए बच्चों में यीशु को भरा जाता तो इस पीढ़ी के बच्चे कितना बदले बदले से होते! मसीही परिवारों के

बच्चों में मनफिराव बेहद आवश्यक हो गया है।

आवश्यक पाठ पढ़ाकर बच्चों से संवाद करना और उनके मित्रों के बारे में जानकारी लेना, जीवन में आनेवाली परेशानियों पर चर्चा करना, उद्धार और बपतिस्मा की आवश्यकता के बारे में उन्हें समझाना बहुत ही आवश्यक है।

आराधना में भी बहुत परिवर्तन आवश्यक है। तेज आवाज के साथ बाजे बजाकर नाच गाकर पसीना बहाने और थकने के बाद यह कहकर संतुष्ट हो जाना केवल 'प्रहसन' मात्र है कि आराधना फलीभूत हुई। शहरों में इसका एक भिन्न रूपांतर देखने को मिलता है। वाद्ययंत्रों में ही सारा खेल है। ताल, लय और तो और अन्यभाषा भी पहले से रिकार्ड कर लिया जाता है तथा पोस्टर को भिन्न भिन्न रूप में तैयार किया जाता है ।

क्या यही आराधना है? क्या इसी के लिए हम रविवार को इकट्ठा होते हैं? इसमें से आत्मा को क्या मिलेगा? इसके द्वारा हम देह का प्राषण करते हैं। यह पहचानना है कि इससे आत्मा को पोषित नही कर रहे हैं। आत्मा तो परमेश्वर के वचन रूपी तलवार से ही आर पार छेदा जाता है। इसके लिए पास्टरों को प्रार्थना और वचन मनन में बने रहने पर ध्यान देना चाहिए। साथ ही साथ उन्हें वचन से प्राप्त भेदों को लोगों तक पहुँचाना भी चाहिए ताकि ऐसा करने से लोगों के हृदय छेदे जाएँ और वे रूपांतरण प्राप्त करें। आराधना के लिए एकत्रित होने का स्थान यह सीखने का स्थान है कि अगले एक सप्ताह किस प्रकार जीना है तथा क्या प्रचार करना है। महाविद्यालयीन शिक्षा की ओर अग्रसर होनेवाले बच्चों के प्रति हमें उत्तरदायित्व होना चाहिए। उनके मोबाइल फोन, कंप्यूटर आदि पर हमारी नजर पड़नी चाहिए। यदि वे उसे छूने या देखने नहीं देते हैं तो हमें यह पहचानना चाहिए कि वे परमेश्वर से दूर हो रहे हैं। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि मोबाइल फोन, कंप्यूटर आदि मेरे परमेश्वर के लिए पवित्र हैं और उनमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो मेरे परमेश्वर के देखने या सुनने के योग्य नहीं है। माता पिताओं को बच्चों से भयभीत होने की जरा सी भी आवश्यकता नहीं है।

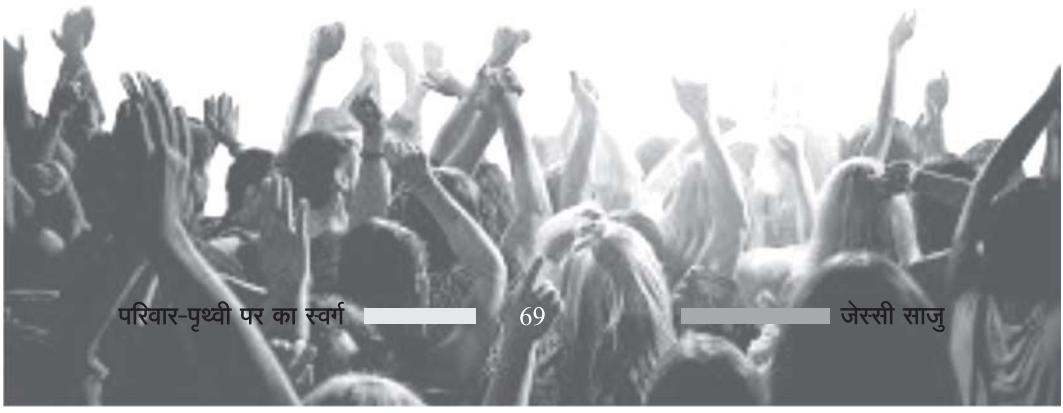

हॉस्टलों में रहने के लिए जाने वाले बच्चों के लिए हमें सबसे पहले जानने की आवश्यकता यह है कि क्या उनके असपास कोई कलीसिया है जहाँ वे आराधना के लिए जा सकते हैं। कई लोग ऊँची फीस देकर प्रवेश लेने के बाद यह पता करते हैं और बिल्कुल भी पता नहीं करनेवाले भी हैं। माता पिताओं को चाहिए कि वे निरंतर यह जानकारी लेते रहें कि क्या उनके बच्चे आराधना में नियमित रूप से भाग लेते हैं और आत्मिकता में बढ़ रहे हैं कि नहीं। संभव हो तो बच्चे के साथ आराधना में भाग लेने के प्रयास करना चाहिए। छोटी कलीसियाओं में बच्चों को भेजना सबसे उत्तम होता है। हो सकता है कि बड़ी कलीसियाओं में पास्टर उन पर ध्यान न दे पाएँ। किन्तु हमें नहीं भूलना चाहिए कि बच्चों को बड़ी कलीसिया अच्छी लगती है। वे चाहते हैं कि कोई उन पर ध्यान न दें।

इस 'मौसम' में जब कॉलेज एडमिशन और हॉस्टल आदि के बारे में विचार किया जाता है तो हम बहुत ही जागरूकता, तल्लीनता और परमेश्वर पर भरोसा करते हुए अपने बच्चों का भविष्य परमेश्वर के हाथों में सौंप दें...।

परिवार जिन्हें
परमेश्वर बनाता है

अपनी एक सहेली से काफी दिनों के बाद मुलाकात हई। अवसर एक विवाह भोज का था। बातचीत के बीच मैंने भी कहा कि जल्दी आनेवाले 'विवाह-प्रस्ताव' जल्दी 'टूट' भी जाते हैं। यह बात मैंने उनके द्वारा किए गए कुछ रहस्योद्घाटन के प्रतिक्रिया स्वरूप कही थी।

मध्य त्रवनकोर में मसीही बहुसंख्यक शहर में एक पेंतिकुस्त कलीसिया में आने वाले लोगों में से ही 8 परिवार विवाह विच्छेद किए हुए परिवार हैं।

पारिवारिक जीवन के बारे में कक्षाएँ लेने जाने पर जो कहानियाँ सुनने में आती हैं वे चौंकाने वाली हैं। 'सार्वजनिक' रूप से बताने या लिखने लायक नहीं हैं।

नब्बे प्रतिशत कहानियों में अपराधी बच्चे नहीं हैं, अपितु 'दलाल' और माता पिता हैं।

बच्चों का भविष्य सुरक्षित करने के लिए वे सबसे अहम् स्थान 'धन' को देते हैं। इसमें नौकरी और परिवार की संपत्ति आदि सबकुछ शामिल है। धनवान से विवाह

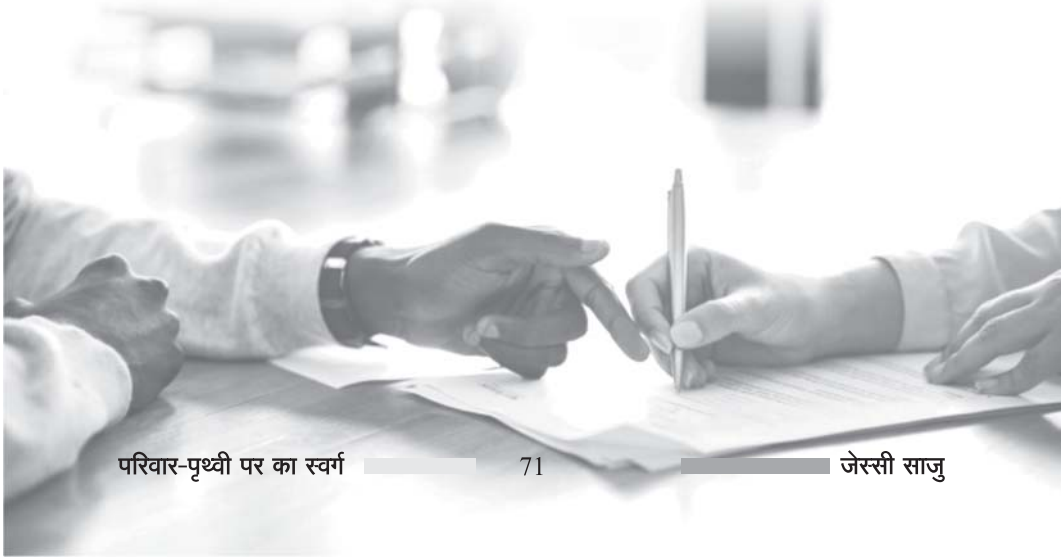

कराने से मेरी बेटी 'सुरक्षित (secure) हो जाएगी। फिर उनके भविष्य को लेकर कोई चिंता नहीं करनी है। अच्छी बात है! इसी के साथ बच्चों से प्यार करने वालों की व्याकुलता समाप्त हो जाती है!

उनकी दूसरी प्राथमिकता पढ़ाई की होती है। (अच्छी नौकरी और धन है तो पढ़ाई नहीं है तो भी चलेगा।) ये लोग क्यों नहीं समझते हैं कि 'शिक्षा' नामक 'व्यापार' एक बहुत बड़ा 'धोखा देने वाला गड़हा' है? लाखों रुपए 'डोनेशन' और 'घूस' देकर पाने वाला एडमिशन! वहाँ से जैसे तैसे पास होकर बाहर निकलने वाले 'बुद्धिमान' बच्चे! यदि वे सोचने वाले होगे तो अपने मातापिताओं के धोखे के बारे में होगा। वे सोचेंगे कि 'लंगडे को बहरा धोखा देगा तो बहरे को परमेश्वर दंड देगा।'

इस लेख को लिखना प्रारंभ करते समय जो प्रतिक्रिया मिलने लगी उसे दुहराती हूँ। 'अचानक आया हुआ एक रिश्ता था, जल्द ही टूट गया।'

अचानक 'रिश्ता' कैसे आता है? एक ही दिन में बच्चों की उम्र बढ़ तो नहीं जाएगी न। उनके लिए तभी से प्रार्थना करना प्रारंभ करें जब वे गर्भ में अस्तित्व में आते हैं। उनके जीवन साथियों के लिए पहले माता पिता और तब वयस्क हो जाने पर (14, 15 वर्ष की आयु में) उन्हें यह बात बताकर उनसे प्रार्थना करवाना प्रारंभ कर सकते हैं। उन्हें प्रेरित किया जाना चाहिए कि जैसा परमेश्वर ने सोचा वैसे ही वे भी सोचें। अदन में आदम की सृष्टि करने के बाद परमेश्वर ने उसे गहरी नींद दी। गहरी निद्रा से जागने पर परमेश्वर ने उसके सामने स्त्री को खड़ा किया। विवाह का प्रस्ताव आने पर परमेश्वर ही चुनाव करके दे! इतना ही काफी है कि हम शांत मन से उस पर सारा भार डाल दें।

किन्तु परमेश्वर द्वारा ही चुनाव होना है तो हमें उसे इस बात की स्वतंत्रता देना ही होगा। जब हम निर्णय लेते हैं कि परमेश्वर चुनाव करे तो हमें उससे कुछ भी 'डिमाँड' करने का अधिकार नहीं है। वह हमारी 'सूची' पर हस्ताक्षर करनेवाला परमेश्वर नहीं है। यदि परमेश्वर करता है तो वह सबसे पहले यह करेगा कि हमारे लिए एक व्यक्ति को चुनकर देगा। आप सोचेंगे कि 'व्यक्ति' नहीं तो 'पशु' को देगा। (व्यक्ति का व्यक्तित्व समाप्त हो जाए तो वह पशु के समान बन जाएगा)।

आजकल विवाह एक व्यापार बन गया है। कुछ लोग परिवार की प्रतिष्ठा से विवाह करते हैं तो कुछ लोग धन से विवाह करते हैं। इन सब बातों से अलग कुछ लोगो नौकरी या शिक्षा से विवाह करते हैं। व्यक्तित्व या उनमें के विचारों से विवाह करना आजकल चलन से बाहर होता जा रहा है।

हरेक व्यक्ति को परमेश्वर ने एक 'बुलाहट' दिया है। हो सकता है वह सुसमाचार सेवा हट हो। या नौकरी का चुनाव करने की एक बुलाहट हो। किन्तु इन सबके

पीछे लगाम थामनेवाला परमेश्वर ही है। उसी की इच्छा पूरी होनी चाहिए। हमें उस बुलाहट के अनुसार उसकी सृष्टि के कार्य में सहभागी होना चाहिए। जब परमेश्वर हमें बाग की रखवाली सौंपता है तो वह केवल इतना ही चाहता है कि हम विश्वस्तता के साथ रखवाली करें। विश्वस्तता के साथ पढ़ाई करें। (पढ़ाई पिता, माता, शिक्षक, या फिर अपने लिए भी नहीं करना चाहिए)। पढ़ाई एक 'भेंट' है जिसमें हम परमेश्वर को वह सबकुछ उसी नाप और मात्रा में वापस करते हैं जितना उसने हमें दिया है। हमारी नौकरी आदि सबकुछ ऐसा ही है। जब हम अपना पूरा परिश्रम (effort) करते हैं तो वह ऐसी भेंट में बदल जाता है जिसमें परमेश्वर प्रसन्न होता है।

1. जीवन-साथी को पाने के लिए विश्वासयोग्य परमेश्वर के हाथों में अपनी बातों को सौंप कर विश्वास के साथ इंतजार करना चाहिए।

2. साथी का अर्थ ही होता है, वह व्यक्ति जो

हमारे कर्तव्य को पूरा करने हमें निरंतर प्रोत्सहित करता है, उस कार्य को पूरा करने के लिए हमें दिया गया सहायक (helper)।

यह वैसा ही है जैसे काम करनेवाला व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की सहायता लेकर जल्दी कार्य करता है। ऐसी स्थिति में अपने साथी में हमें अपने बुलाहट के अनुरूप बातें खोजनी चाहिए। क्या यह 'कार्य' वह कर सकता/सकती है? उनके एक होने से यह पूरा होगा? एक साथी में हमें ये बातें खोजनी चाहिए,Idea+Idea वैचारिक समानता, Vision+Vision दृष्टि (बाहरी नहीं) समानता, Mission+Mission कार्य में समानता।

3. विवाह की बातचीत करते हुए साथी के बारे में अच्छी तरह जानकारी प्राप्त करना चाहिए। यह काम भरोसेमंद लोगों को सौंपना चाहिए। अत्यधिक ईर्ष्या, स्वार्थ, और जलन से भरे इस युग में जिम्मेदार लोगों द्वारा पता किया जाना चाहिए। किसी के कुछ कहने से यदि हम कुछ करें तो उसका कटु अनुभव हमें ही करना पड़ेगा।

जीवन-साथी की खोज करने पर परमेश्वर के भय में जीने वाले बच्चों की खोज करनी चाहिए। यह क्षेत्र बहुत धोखे से भरी है। क्योंकि हम सोचते हैं कि विश्वासी परिवार के बच्चे हैं, कितनी पीढ़ी से विश्वास में हैं, लेकिन हमें ध्यान देना है कि पीढियों के बदलने पर परंपराएँ और रीतियाँ भी बदलती हैं। आवश्यक नहीं कि लड़का और लड़की में भी यह विश्वास और भक्ति हो। यह पता करना चाहिए कि क्या वे वास्तव में उद्धारप्राप्त (मनफिराव का अनुभव रखते) हैं? हम आज भी एक नकली स्वर्ग में हैं। पेंतिकुस्त कलीसियाओं में जन्म लेने वाले सभी पेंतिकुस्त हैं। लेकिन नया जन्म पाए बिना वे पेंतिकुस्त तो क्या 'मसीही' भी नहीं हैं। (सांसारिक लोगों से केवल यही अंतर रह जाता है कि आभूषण नहीं पहनते हैं)। जिस प्रकार 16, 17 वर्ष की उम्र में अनुष्ठान करते हैं उसी प्रकार वे बपतिस्मा के जल में उतरे होंगे! मसीह का स्वभाव अपनाए बिना किया जाने वाला 'मनफिराव' सच्चा मनफिराव नहीं होता है। यदि यह जानना है कि एक व्यक्ति नया जन्म प्राप्त है या नहीं तो यह जाँचना काफी है कि क्या उसमें पिता (मसीह) का स्वभाव है।

ऐसे युगलों को ही आपस में विवाह करना चाहिए जिन्होंने यह स्वभाव प्राप्त किया है। तभी विवाह सफल होगा। चाहे जितना भी समझौता adjustment किया जाए लेकिन यदि मसीह केंद्रित नहीं हैं तो पारिवारिक संबंध शिथिल होगा।

हमारे घर में एक युवक आए जो भविष्यवक्ता और पास्टर थे। बात चीत करते हुए उन्होंने कहा, मैंने 30 लड़कियाँ देखी, लेकिन नहीं जमा। अंततः 31 वीं लड़की से विवाह रचाया। मैं मुँह फाड़े उन्हें देखती रह गई। वाह! आश्चर्य! हो सकता है इनकी पत्नी विश्वसुंदरी हो। मेरे विचारों पर विराम लगाते हुए उन्होंने कहा, ''आंटी, चौंकिए मत। मैंने जिन 30 लड़कियों को देखा था उनमें से आधे से अधिक को सुसमाचार सेवा नहीं चाहिए

था। बाकी का कहना था कि सुसमाचार सेवा भी चलेगा... एडजस्ट कर लेंगे। मेरी पत्नी (31 वीं लड़की)... केवल उसने कहा - ''केवल सुसमाचार सेवा ही चाहिए।'' उसके आगे मैंने कुछ भी नहीं देखा। मैंने ठान लिया कि मेरे साथ मिलकर बुलाहट को पूरा करने के लिए यही लड़की ठीक है। मुझे बहुत उत्साह महसूस हुआ। मैं कई सुवा मिशनरियों को जानती हूँ। वे ऐसी ही निश्चयता के साथ जीते हैं। उन्हें केवल ऐसी ही लड़की चाहिए जो सुसमाचार सेवा के लिए पूर्ण समर्पण रखते हैं; इसके लिए चाहे जितना वर्ष भी इंतजार करना पड़े। लेकिन समस्या यह नहीं है; आजकल सुसमाचार सेवा के लिए समर्पित लड़कियों का अभाव है - यदि हैं भी तो 'भविष्य को सुरक्षित' करने के विचार उनके माता पिता उन्हें उस विचार से मुँह मोड़ने के लिए तैयार कर लेते हैं। इसमें से मुक्ति आवश्यक है। ये कब समझेंगे कि परमेश्वर की सेवा करने से बढ़कर सम्मान और आशीष और कहाँ मिलेगा और संसार में सबसे 'सुरक्षित' वे ही हैं ?

सबको यह समझना है कि सबसे बड़ी सुरक्षा इस बात में है कि मेरे बच्चे पीने खाने वालों और व्यभिचारियों के हाथों में न पड़कर किसी 'विश्वासी' के हाथों में तो है। धन तो कम ज्यादा होता रहता है। पद, मान सम्मान आदि भी ऐसा ही है।

किंतु हमें इस बात को पहचानना है एक ऐसा परिवार आनंद और सुरक्षा की भावना प्रदान करता है जिसका संचालन एक विश्वासी स्त्री और विश्वासी पुरुष के हाथों में होता है।

घर बनाने वाले

एक बार किसी ने मुझसे पूछाः साजु के साथ अफ्रीका में 'रहने' लगी हूँ। मैंने कहाः कभी कभी जाती हूँ। लेकिन गृह निर्माण' पूरा नहीं हुआ है अतः पूरी तरह वहाँ 'रहने नहीं' लगी हूँ । चूँकि वे एक पवित्र और आत्मिक जन थे इसलिए मेरी कही हुई बात का अर्थ पूरी तरह समझकर वे मुस्कुराए। यदि कोई ऐसा व्यक्ति होते जो आत्मिकता की भाषा नहीं समझते हैं तो वह कहते, ''अच्छा, तो आप नया घर बनवा रहे हैं, काम कहाँ तक पहुँचा...आदि।''

गृह निर्माण का अर्थ भवन निर्माण करना नहीं है। ध्यान दीजिए कि रूत और बोअज़ के विवाह के दौरान इस्राएल के प्राचीनों ने उन्हें किन शब्दों में आशीष दिया... ''यह जो स्त्री तेरे घर में आती है उसको यहोवा इस्राएल के घराने की दो उपजाने वाली राहेल और लिआः के समान करे (रूत 4:11)।

उत्पत्ति नामक पुस्तक में भी लिआः और राहेल की प्रशंसा के बारे में इतनी बड़ी बातें दिखाई नहीं देती हैं जिसमें उनके बारे में वर्णन किया गया है। इसके अलावा कि वे याकूब की पत्नियाँ थीं। किन्तु रूत की पुस्तक में उनके सारे इतिहास को चकित करने वाली बात कही गई है - वे इस्राएल के घराने के दो उपजानेवाली हैं ।

क्या वास्तव में वहाँ याकूब का नाम नहीं आना चाहिए? सामान्य इतिहास को देखें तो उत्तर हाँ होगा। लेकिन यहाँ पवित्रात्मा कहता है कि लिआः और राहेल इस्राएल के घराने की उपजानेवाली हैं ।

हम जानते हैं कि लिआः और राहेल याकूब के बारह पुत्रों की माताएँ थी जो बारह कुलपिता बने। कुलपिताओं का बचपन बहुत अधिक आत्मिकता में नहीं बीता था। वे तो अपने नाना लाबान के घर में पले बढ़े थे। अब्राहम के घर में जो आत्मिक स्तर था उतना लाबान के घर में नहीं हो सकता था न। उनका पिता याकूब परमेश्वर को जानते थे लेकिन उस स्तर पर नहीं जितना उनको जानना चाहिए था; यही सच्चाई है। हम जानते है कि याकूब चाल चलने वाला, स्वार्थी और स्वयं पर भरोसा रखनेवाला व्यक्ति था। ऐसी स्थिति में उन बारह नौजवानों को संभालना लिआः और राहेल के लिए कितना कठिन कार्य रहा होगा।

सवाल उठ सकता है कि क्या पनिएल में याकूब को सच्चा मनफिराव नहीं हुआ था। हाँ, बिल्कुल हुआ था ! स्वार्थ, चालाकी और स्वयं पर भरोसा दूर करके परमेश्वर पर भरोसा उत्पन्न करने के लिए परमेश्वर को उसके साथ यब्बोक नदी के किनारे मल्लयुद्ध

लड़ना पड़ा था। चाहे कुछ भी हो, अंततः उसने स्वयं को परमेश्वर को समर्पित किया...। वह उसका नया जन्म पाने वाला दिन था। परमेश्वर ने उसे एक नया नाम दिया। इस्राएल (जन्म लेने पर ही तो नाम मिलता है)।

पति के मनफिराव ने गृहनिर्माण में लिआः और राहेल की बहुत सहायता की होगी। किंन्तु 'गृहनिर्माण' का कार्य उस दिन तो प्रारंभ नहीं हुआ था न। पनिएल के अनुभव के दौरान याकूब के पुत्र किशोरावस्था को पार कर गए थे। अर्थात् 'गृहनिर्माण' का काम काफी पहले आरंभ हो चुका था। 'गृहनिर्माण' का काम स्त्रियों का, गृहणियों की ही जिम्मेदारी है। बच्चों का निर्माण करने की जिम्मेदारी परमेश्वर ने माताओं को दिया है।

गृहनिर्माण का तात्पर्य बच्चों के निर्माण से है। बच्चों का निर्माण किस प्रकार करना है। आज हम हर कहीं ऐसे माता पिताओं को देखते हैं जो बच्चों को इंजीनियर और डॉक्टर बनाना चाहते हैं। बच्चे पढ़ें...नौकरी करें...इसमें कोई समस्या नहीं है। किन्तु बच्चों को नौकरी करनेवाले...और धनी बनाना? गृहनिर्माण का अर्थ है कि आपके बच्चों के बारे में परमेश्वर क्या चाहता है।

''वह परमेश्वर के योग्य सन्तान चाहता है'' (मलाकी 2:15)। परमेश्वर आपके बच्चों में से क्या चाहता है?

हिंदी भाषा में यह पद अधिक स्पष्टता के अनुवादित नहीं है। अविश्वासयोग्ता दिखानेवाले विवाहितों से एक किया जानेवाला एक प्रश्न है। ''उसी ने ही तो उन्हें एक किया है। परमेश्वर ने उन्हें क्यों एक किया? उसने उनमें से एक पवित्र प्रजा की आशा की...। इसलिए अपनी ही चौकसी करो। (Did He not make them one ? And why did he make them one ? He was seeking Godly offspring....(Mal 2:15 ISV).

विवाहितों से परमेश्वर चाहता है कि वे बच्चे उत्पन्न करें और उन्हें 'पवित्र प्रजा बनाकर' पालकर परमेश्वर को वापस करें। इस जिम्मेदारी में माता पिताओं की भूमिका है। मैं विश्वास करती हूँ कि परमेश्वर ने माता पिताओं को यह काम सौंपा है।

स्त्री का सिर पुरुष है...शासन और अधिकार आदि पति के हाथों में ही रहने दीजिए। लेकिन माताएँ ही बच्चों के साथ अधिक समय व्यतीत करती और उन्हें अधिक प्रभावित करती हैं। पिता को तो वे साथ में खड़े होकर देखते हैं। लेकिन उन्हें परमेश्वर के भय में बढ़ाने का काम निश्चय ही माताओं का है।

परमेश्वर के वचन के उस भाग पर ध्यान दीजिए जिसमें प्रेरित पौलस एक स्त्री - कुटुंबिनी की जिम्मेदारियों के बारे में बात करता है। यह 1 तीमुथियुस 2:9-15 में पाया जाता है।

पहली बात, उसके 'श्रृंगार' के बारे में...उचित वस्त्र पहनें। संकोच, संयम और भले कामों के साथ अपने आप को संवारना है। शांत भाव (मौन) और पूर्णाज्ञापालन ही स्त्री को संपूर्ण करती है। लेकिन इन सबसे बढ़कर उसका एक उत्तरदायित्व है जो परमेश्वर ने उसे दिया है... वह यह है कि वह बच्चे जनने के द्वारा उद्धार पाएँगी !

यह वचन बच्चों के जन्म लेने की आशीष के बारे में बताने के लिए नहीं है। बच्चों को जन्म देने (child bearing) का यह भाग; यहाँ बच्चों को जन्म देने की एक प्रक्रिया के बारे में बताया गया है...जन्म देकर पालने के अर्थ में। यह कहना भी गलत नहीं होगा कि वह बच्चों को पाल कर उद्धार पाएगी !

एक कुटंबिनी का पहला उत्तरदायित्व 'बच्चों को पालना' है। मलाकी की पुस्तक में हम देखते हैं कि यह कैसे पालना है। 'पवित्र लोग' के रूप में पालना है। क्योंकि जब आपको और आपके साथी को परमेश्वर ने एक किया है तो उसके मन में एक आशा थी। यह आशा कि आप परमेश्वर के योग्य संतान देंगे (मलाकी 2:15)।

यह एक दिन में पूरा होने वाला काम नहीं है। यह एक प्रक्रिया है। इसका आरंभ पति पत्नी का संबंध ही तो है। सबकुछ वहीं से शुरू होना है। जो पति पत्नी पवित्रता को संभाले रहते हैं वे ही एक पवित्र भवन का निर्माण कर सकते हैं...एक पवित्र भवन में रहने वाले बच्चे ही पवित्र लोगों के रूप में बढ़ सकते हैं। अतः पति पत्नी के रिश्ते से 'पवित्रता' प्रारंभ होती है। पारिवारिक जीवन में की विश्स्तता भवन की नींव का पत्थर है।

अगला बच्चे हैं...इससे बढ़कर कि बच्चे आपकी बात सुनकर बड़े होने से बढ़कर आपके काम देखकर बड़े हो रहे हैं। इसीलिए आपकी हरकतें, आपके स्वभाव और काम बच्चों को प्रभावित करते हैं। इसीलिए पौलुस स्मरण दिलाता है कि परिवार में आदर्श जीवन जीना है।

जो माताएँ (1 तीमुथियुस 2:10) बाह्य श्रृंगार को बड़ा मानती हैं वे बच्चों का पालन पोषण भक्ति में नहीं कर सकती हैं। उसे अपना श्रृंगार करने के लिए सोना, मोती, महँगे वस्त्रों से नहीं करना चाहिए। बल्कि अच्छे कामों के द्वारा करना चाहिए। यह देखते हुए बड़े होने वाले बच्चे स्वाभाविक रूप से अच्छे कामों में बढ़ेंगे।

यदि स्त्री विश्वास, पवित्रता में होशोहवास के साथ बनी रहती है तो, वह बच्चों का पालन पोषण करके अपना दायित्व पूरा करेगी ! माँ का विश्वास, प्यार, पवित्रता और सुबोध ही बच्चों में साझाा किया जाना चाहिए।

माँ को पति पत्नी के संबंधों में की शांति, आज्ञाकारिता, तथा उस विश्वास, पवित्रता, प्यार जैसे गुणों को साझा करने में आदर्श बनना है जो परिवार में के बच्चों आदि के प्रति होती है। इसी के साथ तीसरा संबंध भी है। वह माता पिताओं के प्रति आपका

व्यवहार है। आपके बच्चे देखते रहते हैं कि आप अपने सास ससुर के साथ किस प्रकार का व्यवहार करते हैं।

रूत के परिवार को बुजुर्गों ने आशीष दिया था कि वह लिआः और राहेल के समान परिवार का निर्माण करेगी। लेकिन किस बात ने बोअज़ को रूत की ओर खींचा?

''बोअज ने उत्तर दिया, जो कुछ तू ने पति मरने के पीछे अपनी सास से किया है, और तू किस रीति अपने माता पिता और जन्मभूमि को छोड़कर ऐसे लोगों में आई है जिनको पहिले तू ने जानती थी, यह सब मुझे विस्तार के साथ बताया गया है'' (रूत 2:11)।

रूत ने न केवल एक शक्तिशाली और सुंदर पति से वाचा बाँधा था, बल्कि अपनी बूढ़ी विधवा सास से भी था जिसके बच्चे मर चुके थे। उसने पति से नहीं बल्कि सास से कहा था कि ''मृत्यु छोड़ और किसी कारण मैं तुझ से अलग नहीं होऊँगी'' (रूत 1:17)।

उसने अपनी बात पूरी की। जब मृत्यु पति को ले गई तब भी वह सास के साथ रही। नाओमी को नहीं छोड़ी। जब ओबेद के रूप में रूत को संतान उत्पन्न हुआ तो नाओमी बच्चे को लेकर गोद में लिटाई; उसकी धाय बनी। (रूत 4:16)। ओबेद नोओमी का बेटा नहीं है, पोता भी नहीं है लेकिन लोगों ने कहा, ''नाओमी के एक बेटा उत्पन्न हुआ है'' (रूत 4:17)। रूत और नाओमी के बीच का संबंध इतना प्रगाढ़ था।

जब ओबेद यह संबंध देखते हुए बड़ा हुआ है तो वह पवित्र प्रजा कैसे नहीं बनेगा? उस ओबेद का बेटा यिशै पवित्रजन क्योंकर नहीं बनेगा? उस परिवार में दाऊद क्योंकर जन्म नहीं लेगा? ओबेद दाऊद के पिता यिशै का पिता था (रूत 4:17)। हमारे प्रिय तारणहार को दाऊद की संतान पुकारा जाता है न। पवित्रता पीढ़ियों तक जाती है... !

गृहनिर्माण से पहले हमें अपने आप का निर्माण करना है। हमें परमेश्वर में जीना है। हमारे बच्चों को हमें विश्वास, प्रेम और पवित्रता में आनंदपूर्वक रहते हुए देखकर बड़े होना है...तभी बच्चे अथवा गृह निर्मित किया जाता है।

यदि विश्वास, प्रेम और पवित्रता में होशोहवास में रहते हैं तो स्त्रियाँ बच्चों को जन्म देकर पवित्र प्रजा बनाकर परमेश्वर को समर्पित कर सकती हैं।

गृहनिर्माण करने के लिए परमेश्वर ने बहनों को ठहराया है। राहेल और लिआः के समान हम गृहनिर्माण करें। संभव है कि दबोरा के समान कलीसिया निर्माण और तबीता के समान समाज निर्माण में परमेश्वर हमें उपयोग करे। किन्तु बच्चों को पवित्र लोग बनाकर गृहनिर्माण करना परमेश्वर द्वारा प्रत्येक कुटुंबिनियों को दी गई जिम्मेदारी है। ऐसे परिवार निश्चय ही पृथ्वी में स्वर्ग होंगे!!